पालि-ग्रन्थमाला

[१९]

श्रीमहाथेर-लेदि-सयदाव-विरचितो

पट्ठानुद्देसदीपनी

सम्पादको

डॉ. विमलेन्द्र कुमार



सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

वाराणसी

PĀLI-GRANTHAMĀLĀ
[Vol. 19]

PAṬṬHĀNUDDESADĪPANĪ

of

ŚRĪ MAHĀTHERA LEDI SAYADĀVA

EDITED BY
DR. VIMALENDRA KUMĀRA
Reader, Pāli & Bauddha Adhyayana Department
Banaras Hindu University
Varanasi



VARANASI
2005

ISBN : 81-7270-157-8

Research Publication Supervisor—
Director, Research Institute
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi.



Published by—
Dr. Harish Chandra Mani Tripathi
Director, Publication Institute
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.



Available at—
Sales Department,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.



First Edition, 500 Copies

Price : Rs. 24.00



Printed by—
Shreejee Printers
Nati Imli. Varanasi-221001

पालि-ग्रन्थमाला

[१९]

श्रीमहाथेर-लेदि-सयदाव-विरचितो

पट्ठानुद्देसदीपनी

सम्पादको

डॉ. विमलेन्द्र कुमार

उपाचार्य, पालि एवं बौद्ध अध्ययन विभाग

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी



वाराणसी

२०६२ वैक्रमाब्द १९२७ शकाब्द २००५ खैस्ताब्द

अनुसन्धान-प्रकाशन-पर्यवेक्षक —
निदेशक, अनुसन्धान-संस्थान
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी।

ISBN : 81-7270-157-8

❑

प्रकाशक —
डॉ. हरिश्चन्द्र मणि त्रिपाठी
निदेशक, प्रकाशन-संस्थान
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१००२

❑

प्राप्ति-स्थान —
विक्रय-विभाग,
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१००२

❑

प्रथम संस्करण – ५०० प्रतियाँ
मूल्य – २४.०० रूपये

❑

मुद्रक —
श्रीजी प्रिण्टर्स
नाटी इमली, वाराणसी-२२१००१

भूमिका

अनन्त-करूणा-पञ्ञं, तथागतं अनुत्तरं।
वन्दित्वा सिरसा बुद्धं, धम्मं साधुगणं पि च।।

प्रस्तुत ग्रन्थ पट्ठानुद्देसदीपनी अभिधम्म पिटक के सातवें ग्रन्थ 'पट्ठानप्पकरण' के दर्शनों को संक्षिप्त रूप में प्रकट करनेवाला एक लघु ग्रन्थ है। जैसा कि विदित है, पट्ठानप्पकरण में अभिधर्म में प्रतिपादित परमार्थ धर्मों-चित्त, चैतसिक,रूप तथा निर्वाण के परस्पर विरोधी स्वभाव-सम्पन्न होते हुए भी पूर्ण सहयोग से काम करते हैं। नाम चेतन है तथा रूप जड़ है। इन दोनों के संयोग से मनुष्य का निर्माण होता है। मनुष्य के मानस में विविध प्रकार के विकल्प उठते हैं। तदनुसार उसके शरीर में गति होने लगती है। पर यह कैसे होता है, यह जटिल प्रश्न है। नाम और रूप के परस्पर सम्बन्ध को पट्ठानप्पकरण में चौबीस प्रत्ययों (सम्बन्धों) के द्वारा दर्शाया गया है। पट्ठानप्पकरण में प्रतीत्य समुत्पाद की कारण कार्य परम्परा में बारह कड़ियों की व्याख्या पर जोर न देकर उन प्रत्ययों पर जोर दिया गया है, जिनके आश्रय से वे पैदा होती और निरुद्ध होती रहती है। दूसरे शब्दों में चौबीस प्रत्ययों के सहारे परमार्थ धर्मों का उत्तानीकरण अत्यन्त विश्लेषणात्मक ढ़ंग से किया गया है। पहले उद्देस क्रम से उनका कथन है तथा पुन: निद्देस क्रम से प्रत्येक प्रत्यय की व्याख्या है। इस प्रक्रिया द्वारा प्रतीत होता है कि भगवान बुद्ध का अभिप्राय धर्मों को अत्यन्त सुबोध एवं सरलतया प्रतिवेध्य बनाना था। फिर भी इस प्रकरण में यत्र तत्र ग्रन्थिस्थल भी रह गये हैं। पट्ठानुद्देसदीपनी ग्रन्थ का स्वरूप दो दृष्टियों से देखी जाती है। प्रथमत: यह पट्ठानप्पकरण के विषय का सामान्य परिचय देती है तथा पुन: यत्र तत्र उपलब्ध ग्रन्थिस्थलों का उत्तानीकरण करती है।

पट्ठानुद्देसदीपनी के रचयिता : महाथेर लेदि सयदाव

पट्ठानुद्देसदीपनी के रचयिता महाथेर लेदि सयदाव माने जाते है, जो अपने समय के बौद्ध आचार्यों में प्रसिद्ध और अग्रणी थे। भिक्षु न्याण जो कि बाद में लेदि सयदाव के नाम से जाने गये, का जन्म म्यांमार के श्वेवो जिला के दिपेयिन शहर के सैंग-पिन ग्राम में १८४६ ई. (बरमी १२०८) में हुआ था। उनके पिता का नाम यू तुन था और माता का नाम दाव चोन था। जीवन के प्रारम्भ में ही उनकी प्रबज्या श्रामणेर के

रूप में हो गयी थी और २० वर्ष की आयु में सालिन सयदाव यू पण्डिच्च के द्वारा भिक्षु बनाये गये। उन्होंने अनेक आचार्यों के द्वारा शिक्षा ग्रहण की। उनके आचार्यों में सान-क्योंग सयदाव और मण्डाले के सुदस्सन धज अतुलाधिपति सीरियवर महाधम्म राजाधिराजगुरु प्रमुख थे।

राजा थीबव के समय लेदि सयदाव मण्डाले के जोतिकाराम महाविहार में पालि के प्राध्यापक बने। १८८७ ई. में वे मौंज्वा नगर के उत्तरी भाग में लेदि-तवया महाविहार के नाम से एक महाविहार बनवायी। वे म्यांमार के सभी प्रदेशों से भिक्षुओं को बुला कर बौद्ध शिक्षा देना शुरू कर दिया। १८९७ ई. में उन्होंने अभिधम्मत्थसंगह की टीका परमत्थदीपनी का पालि में निरूपण किया। बाद में वे म्यांमार के अनेक भागों में बौद्ध धर्म के विकास के लिए अभिधर्म एवं साधना केन्द्रों की स्थापना की। उन्होंने 'अभिधम्मसंखित्त' की रचना की और अभिधम्म के छात्रों को इसकी शिक्षा दी। मुख्य नगरों में वे एक वस्सावास बिताते थे और उपासकों को विनय एवं अभिधम्म की शिक्षा देते थे। उनके द्वारा स्थापित साधना केन्द्रों में से कुछ अभी भी विद्यमान है और प्रसिद्ध हैं। यात्रा-क्रम में वे बरमी में अनेक निबन्ध, पत्र कविताएँ लिखा करते थे। उन्होंने सत्तर से अधिक पुस्तकों की रचना की जिसमें आठ का अँग्रेजी में अनुवाद हो चुका है। उन्हें भारत सरकार के द्वारा १९११ में अग्गमहापण्डित की उपाधि से विभूषित किया गया था। बाद में रंगून विश्वविद्यालय, म्यांमार के द्वारा डी. लिट् (मानद) की उपाधि दी गयी। जीवन के अन्तिम दिनों में वे पिनमन नगर में रहे, जहाँ पर उनकी मृत्यु सतहत्तर वर्ष की आयु में १९२३ ई. में हुई।[१]

महाथेर लेदि सयदाव की प्रमुख रचनायें

महाथेर लेदि सयदाव द्वारा पालि में लिखित रचनाओं में निम्नलिखित मुख्य एवं प्रसिद्ध है—

१. परमत्थदीपनी
२. निरुत्तिदीपनी
३. अनु-दीपनी
४. विभयत्थ टीका
५. वच्चवाचक टीका

---

१. M.B., P. iii.

६. सासनसम्पत्तिदीपनी
७. पट्ठानुद्देसदीपनी
८. सम्मादिट्ठिदीपनी
९. यमकपुच्छाविसज्ज्ना
१०. नियामदीपनी
११. विपस्सनादीपनी

पट्ठानुद्देसदीपनी के रचना काल के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि महाथेर लेदि सयदाव इस ग्रन्थ की रचना १८८७ ई. से १९०० ई. के मध्य में की होगी, जब वे मौंज्वानगर में निवास कर रहे थे। इस ग्रन्थ के निगमन वाक्य से भी यह प्रमाणित होता है।[१]

पट्ठानुद्देसदीपनी की विषम वस्तु तथा इसके परिच्छेद

पट्ठानुद्देसदीपनी अभिधर्म पिटक के सप्तमप्रकरण पट्ठानप्पकरण के प्रत्यय से सम्बन्धित एक लघु ग्रन्थ है। पट्ठानप्पकरण में चौबीस प्रत्ययों के सहारे परमार्थ धर्मों के पारस्परिक सम्बन्ध दर्शाते हुए उनके स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। प्रत्यय शब्द से यहाँ 'सम्बन्ध' अर्थ ही अभिप्रेत है। पट्ठान के दार्शनिक पक्ष की ओर संकेत करते हुए विद्वानों ने इसे "फिलासफी आफ रिलेसन्स"[२] बतलाया है। प्रत्यय के बारे में चर्चा करने से पहले 'पट्ठान' शब्द के अर्थ पर विचार कर लेना चाहिए।

'पट्ठान' शब्द में 'प' उपसर्ग 'प्रकार' का द्योतक है। 'ठान' शब्द का अर्थ प्रत्यय होता है। कच्चायण व्याकरण के सूत्र वग्गेघोसाघोसानं ततियपठमा के द्वारा 'पट्ठान' शब्द बना है। प्रत्यय शब्द का अभिप्राय कारण, आधार या सम्बन्ध कहा जा सकता है। इस प्रकार जिस प्रकरण में नाना प्रकार के प्रत्ययों का वर्णन हो उसे पट्ठान कहा जा सकता है।[३] पट्ठान का अर्थ 'विभाग करना' भी कहा गया है।[४] इसका दूसरा अर्थ गति सूचक

१. म्रम्मरट्ठे मौंज्वानगरे लेडीतीअरञ्ञविहारवासिना महाथेरेन कताय पच्चयुद्देसदीपनी—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ.-४०।

२. Ledi Sadaw, On The Philosophy of Relalions, in the *Journal of Pali Text Society*, London, Vol. No. X, 1915-16, pp. 21-52.

३. 'इति नानप्पकारानं पच्चयानं वसेन देसितत्ता इमेसु चतुवीसतिया पट्ठानेसु एकेकं पट्ठानं नाम। इमेसं पन पट्ठानानं समूहतो सब्बं पेतं पकरणं पट्ठानं ति वेदितब्बं—प. अ. पृ. ६१।

४. 'पञ्ञापना पट्ठपना विवरणा विभजना उत्तानीकम्मं ति आगतठानस्मिं हि विभजनट्ठेन पट्ठानं पञ्ञायति'—प.अ., पृ. ६१।

भी देखा जाता है—**'पट्ठितत्थेन, गमनत्थेन ति अत्थो'**।[१] पट्ठान का अर्थ प्रस्तुत ग्रन्थ में 'प्रधान प्रत्यय' के रूप में आया है—**'पधान ठानं ति पट्ठानं'**। यहाँ पर प्रधान का अर्थ प्रमुख और 'ठान' का अर्थ 'प्रत्यय' बतलाया गया है।[२]

'प्रत्यय' शब्द 'पति + अय' से बना है। यहाँ 'पति' (प्रति) शब्द 'प्रतीत्य' अर्थात 'अपेक्षा करके' इस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। 'अय' शब्द 'प्रवर्त्तन' इस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। **'पटिच्च फलं अर्यात एतस्मा ति पच्चयो'** अर्थात् जिन कारण धर्मों की अपेक्षा करके, फल धर्म (प्रत्ययोत्पन्न धर्म) प्रवृत्त होते हैं, उन कारण धर्मों को 'प्रत्यय' कहते हैं।[३] "किसी धर्म के अपेक्षा से ही जो स्थित होता है, उसका बिना परित्याग किए ही जो विद्यमान रहता है, वह प्रत्यय है।"[४] लक्षण की दृष्टि से यह उपकारक लक्षणवाला होता है। जो धर्म जिस धर्म की स्थिति या उत्पत्ति में उपकारक है, वह उसका प्रत्यय कहलाता है।[५] वस्तुत: प्रत्यय, हेतु, कारण, निदान, संभव तथा प्रभव शब्द अर्थत: एक हैं, केवल व्यञ्जनगत ही इनमें पार्थक्य देखा जाता है।[६] इस दृष्टि से उपकारक लक्षण सम्पन्न धर्म का नाम प्रत्यय हो सकता है। दूसरे शब्दों में, 'प्रत्यय' शब्द व्युत्पत्ति के रूप में 'कारण' अर्थ में प्रयुक्त होता है तथा परिभाषिक के रूप में 'उपकारक'—इस अर्थ में होता है। अनुत्पन्न फल (प्रत्ययोत्पन्न) धर्मों का उत्पाद करना एवं किसी एक कारण से उत्पन्न प्रत्ययोत्पन्न धर्मों को स्थितिक्षण में स्थित रखना इन कृत्यों को 'उपकार' कहते हैं।

'प्रत्यय' को समझने के लिए तीन धर्मों को जानना आवश्यक है—प्रत्यय-धर्म (पच्चयधम्म), प्रत्योत्पन्न-धर्म (पच्चयुपन्न धम्म) और प्रत्यय

---

१. 'केनट्ठेन पट्ठानं ति? पट्ठितत्थेन। गमनत्थेना ति अत्थो। गोट्ठतगामो ति आगतठानस्मिं हि येन पट्ठानेन पट्ठितगावो ति वुत्तो, तं अत्थतो गमनं होति'—वही।

२. 'तत्थ पधानं ति पमुखं, ठानं ति पच्चयो, पमुखपच्चयो मुख्यपच्चयो एकन्तपच्चयो ति वुत्त होति पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ३१।

३. अ.वि.टीका, पृ. २१०।

४. 'पटिच्च एतस्मा एतीति पच्चयो, अप्पच्चक्खाय नं वत्तती ति अत्थों'–प. अ., पृ. ७१

५. 'लक्खणतो जन उपकारकलक्खणो पच्चयो, यो हि धम्मो यस्य धम्मस्स ठितिया वा उप्पत्तिया वा उपकारको होति, सो तस्य पच्चयो ति वुच्चति–वही।

६. 'पच्चयो हेतु कारणं निदानं सम्भवो पभवो ति आदि अत्थतो एकं व्यञ्जनतो नामं'—विसुद्धिमग्ग, पृ. ४५०.

च्चय)। प्रत्यय-धर्म वह है, जिसका सम्बन्ध किसी से होता है, यर्योत्पन्न धर्म वह है जिससे उसका सम्बन्ध होता है तथा दोनों के मध्य थत सम्बन्ध ही प्रत्यय है। दूसरे शब्दों में कार्य धर्मों के कारण को 'प्रत्यय' ा उन कारणधर्मों से उत्पन्न कार्यधर्मों को 'प्रत्ययोत्पन्न' कहते हैं— **च्चयतो उप्पन्नं पच्चयुप्पन्नं'**। प्रस्तुत ग्रन्थ पट्ठानुद्देसदीपनी में 'प्रत्योत्पन्न' दो भागों में बाटा गया है—'मुख्य पच्चयुप्पन्न' और 'निस्सन्द च्चयुप्पन्न'। मुख्य पच्चयुप्पन्न को 'सीधा प्रत्योत्पन्न' कहा जाता है और स्सन्द पच्चयुप्पन्न को 'परिणाम प्रत्योत्पन्न' या 'परस्पर प्रत्योत्पन्न' कहा ता है।[१] इन दोनों प्रकारों में सीधा प्रत्योत्पन्न को ही 'एकन्तपच्चयुप्पन्न' हा जाता है क्योंकि इसका प्रत्यय स्थापित हो जाता है तब यह उत्पन्न ता है और कभी नहीं असफल होता है। परन्तु परस्पर प्रत्योत्पन्न में जब यय स्थापित हो जाता है तो कभी उत्पन्न होता है और कभी उत्पन्न ीं होता है।[२] इसीलिए 'एकन्त प्रत्योत्पन्न' पर आधारित होकर वह प्रत्यय कन्त प्रत्यय' कहलाता है। इस 'एकन्त प्रत्यय' को ही 'महाप्रकरण' में लाया गया है।[३] इसी कारण से इन चौबीस प्रत्ययों के समूह को 'पट्ठान' हा जाता है और 'महाप्रकरण' भी कहा जाता है।[४]

पट्ठानप्पकरण में 'हेतुपच्चयो.....अविगत पच्चयों' इस प्रकार चौबीस ययों का सर्वप्रथम उद्देशमात्र दिखलाकर तदन्तर उसकी व्याख्या तिविस्तृत रूप से की गई है। प्रस्तुत ग्रन्थ में पट्ठानप्पकरण के एक अंश स) मात्र का ही लेदि सयदाव द्वारा दिग्दर्शन कराया गया है। इसी ण से इस ग्रन्थ का नाम 'पट्ठानुद्देसदीपनी' रखा गया है। यह ग्रन्थ परिच्छेदों में विभक्त है—१. पच्चयत्थदीपनो, २. पच्चयसभागो एवं पच्चयघटनानयो। इन परिच्छेदों के शीर्षक के अनुसार ही उनमें य-वस्तु का वर्णन किया गया है।

'दुविधञ्हि पच्चयुप्पन्नं निस्सन्दपच्चयुप्पन्नं ति। तत्थ मुख्यपच्चयुधम्मं नाम मूल-पच्चयुप्पन्नं, निस्सन्दपच्चयुप्पन्नं नाम परम्पर पच्चयुघन्नं। तत्थ मूलपच्चयुप्पन्नमेव एकन्तपच्चयुघन्नं नाम'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ४०।

तञ्हि अन्तनो पच्चये सति एकन्तेन उप्पज्जतियेव, नो नुघञ्जति। परम्परपच्चयुधम्मं पन अनेकन्तपच्चयुधम्मं नाम, तञ्हि तस्मिं पच्चये सति पि उप्पज्जति वा, न वा उप्पज्जति—ही।

तथ्य एकन्तपच्चयुधम्मं पटिच्च सो पच्चयो एकन्तपच्चयो नाम। सो एव इमस्मिं हापकरणे वुत्तो'—वही।

तो एव अयं चतुवीसतिपच्चयगणो च इमं महा पकरणं च पट्ठानं ति वुच्चति'—वही।

इस लघु ग्रन्थ का प्रारम्भ चौबीस प्रकार के प्रत्ययों के वर्णन से किया गया है। जो अभिधर्मपिटक के सातवें ग्रन्थ पट्ठानप्पकरण को आधार बनाकर प्रस्तुत किया गया है। साथ ही पट्ठानप्पकरण की अट्ठकथा, मूलटीका एवं अनुटीका से भी सामग्री लेकर एवं जातकों से उद्धहरण लेकर चौबीस प्रत्ययों को समझाने का भरपूर प्रयास किया गया है। प्रथम परिच्छेद के आधार पर पट्ठानुद्देसदीपनी में आगत चौबीस प्रत्ययों का सामान्य परिचय एवं उनके माध्यम से वर्णित परमार्थ धर्मों का संकेत मात्र उपस्थित करने का प्रयास किया जा रहा है—

(१) हेतु-प्रत्यय—लोभ, द्वेष, मोह तथा अलोभ, अद्वेष अमोह नामक ६ हेतु हैं। इनमें तीन अकुशल हेतु तथा अपर तीन कुशल हेतु कहलाते हैं। ये मूल या कारण के अर्थ में हेतु कहे जाते हैं। दूसरे शब्दों में, जिस धर्म में प्रत्योत्पन्न धर्म प्रतिष्ठित होते हैं, उसे हेतु कहते हैं। *'हेतु च सो पच्चयो चा ति हेतुपच्चयों'*[१] जो हेतु होते हुए प्रत्यय भी होता है उसे हेतु-प्रत्यय कहते हैं। यहाँ 'हेतु प्रत्यय' शब्द द्वारा ६ हेतुओं का मुख्य रूप से ग्रहण होता है। इसीलिए कहा गया है—*"कतमो हेतु पच्चयो। लोभो हेतुपच्चयो। दोसो मोहो, अलोमो अदोसो, अमोहो हेतु पच्चयो।"*[२] इन ६ हेतुओं से सम्बद्ध होकर उपकार प्राप्त करने वाले को प्रत्ययोत्पन्न धर्म कहा जाता है। प्रत्ययोत्पन्न धर्मों में मोहमूलद्वय में सम्मिलित मोह के वर्जित होने पर भी लोभमूल एवं द्वेषमूल में सम्प्रयुक्त मोह के अवशिष्ट रहने से ५२ चेतसिक कहे गये हैं। चित्तज रूपों में सहेतुक चित्त से उत्पन्न रूप को सहेतुक चित्तज रूप एवं अहेतुक चित्त से उत्पन्न रूप को अहेतुक चित्तज रूप कहा जाता है। कर्मज रूपों में भी प्रतिसन्धिकाल में होनेवाले कर्मज एवं प्रवृत्ति काल में होने वाले कर्मज—इस प्रकार कर्मज रूप द्विविध होते हैं। उनमें से प्रवृत्ति कर्मज रूपों को वर्णित करना चाहिए। प्रतिसन्धि कर्मज रूपों में भी सहेतुक प्रतिसन्धिचित्त के साथ उत्पन्न होनेवाले कर्मज एवं अहेतुक प्रतिसन्धिचित्त के साथ उत्पन्न होनेवाले कर्मज—इस प्रकार प्रतिसन्धिकर्मज रूप द्विविध होते हैं। पट्ठानुद्देसदीपनी में कहा गया है—*"सहजातरूपकलापा नाम सहेतुक पटिसन्धिक्खणे कम्मरूपानि च पवत्तिकाले सहेतुकचित्तजरूपानि च। तत्थ पटिसन्धिक्खणो नाम पटिसन्धिचित्तस्स उप्पादक्खणो। पवत्तिकालो नाम पटिसन्धिचित्तस्स ठितिक्खणतो पट्ठाय याव चुतिकालं वुच्चति।"*[३]

१. प.अ., पृ. ७०।
२. पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. १।
३. पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. १।

हेतु और प्रत्यय में अन्तर दर्शाते हुए पट्ठानुद्देसदीपनी में कहा गया है कि हेतु प्रत्योत्पन्न धर्म की उत्पत्ति में मूल का काम करता है एवं उसके संधारण में उपकारक होता है। इसको ही परिलक्षित करते हुए—*"मूलट्ठेन हेतु, उपकारकट्ठेन पच्चयो"*[१]—ऐसा कहा गया है। लेदी सयदाव ने इसे समझाने के लिए अनेक उपमायें दी हैं। अतः हेतु प्रत्यय एक ऐसा प्रत्यय है जिसमें ६ हेतुओं में से कोई एक हेतु प्रत्यय धर्म होता है और उस हेतु से सम्प्रयुत्त चित्त, चैतसिक एवं तदुत्पन्न रूप प्रत्ययोत्पन्न धर्म होते हैं—*"एवं द्ब्बिधानि मूलानि सहजातांन पि असहजातानं पि नामरूपधम्मानं पच्चया होन्तीति।"*[२]

२. आरम्मण प्रत्यय—'आरम्मण' शब्द को 'आलम्बित' या अवलम्ब (सहारा) देने वाले के अर्थ में समझा जाना चाहिए। जिस प्रकार उठने बैठने एवं चलने आदि में असमर्थ व्यक्ति लाठी एवं रस्सी आदि के अवलम्ब से उठ, बैठ और चल सकने में समर्थ होता है। उसी प्रकार सभी चित्त चैतसिक धर्म किसी एक आलम्बन का बिना अवलम्ब लिए प्रवृत्त होने में असमर्थ होते हैं। पट्ठानुदेसदीपनी में कहा गया है कि आरम्मण चित्त चैतसिक धर्मों के अवलम्ब देने के अर्थ में है—*'चित्त चैतसिकेहि आलम्बितट्ठेन आरम्मणं'*।[३] आलम्बन का कार्य चित्त चैतसिक धर्मों को ग्रहण करने या उसके साथ संप्रयुक्त होने का है।[४] सभी चित्त, चैतसिक, रूप, निर्वाण एवं प्रज्ञप्ति धर्म आरम्मण प्रत्यय है। ऐसा कोई भी धर्म नहीं है जो चित्त चैतसिक का आरम्मण नहीं है। संक्षेप में आरम्मण छः प्रकार के है; यथा—रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्प्रष्टव्य एवं धर्म।[५] इस प्रकार इन आलम्बनों में से जिस किसी आलम्बन पर चित्त की उत्पत्ति होती है। ऐसी दशा में उस आलम्बन का तथा चित्त एवं तत्सम्प्रयक्त चैतसिकों में जो सम्बन्ध होता है, उसे आलम्बन या आरम्मण प्रत्यय कहा जाता है। दूसरे शब्दों में आरम्मण प्रत्यय वह है जिसमें चित्त चैतसिक, रूप, निर्वाण तथा प्रज्ञप्ति धर्म है एवं उनमें

१. वही   २. एवं वही।

३. पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ३।

४. आलम्वितव्बट्ठेना ति चेत्थ आलम्वणकिरिया नाम चित्त चेतसिकान आरम्मणग्गहणकिरिया, आरम्मणुपादान किरिया—वही, पृ. ४।

५. सब्बे पि चितचेतसिका धम्मा सब्बे पि रूपधम्मा सब्बं पि निब्बानं सब्बा पि पञ्ञत्तियो आरम्मणपच्चयो। न हि सो नाम एको पि धम्मो अत्थि, यो चित्त चेतसिकानं आरम्मणं न होति। संखेपतो पन आरम्मणं द्ब्बिधं होति रूपारम्मणं सद्दारम्मणं गन्धारम्मणं रसारम्मणं 'फोटब्बारम्मणं धम्मारम्मणं ति'—वही, पृ. ३।

से किसी का आलम्बन कर उत्पन्न चित्त चैतसिक प्रत्ययोत्पन्न धर्म है। यहाँ प्रत्यय धर्म नाम तथा रूप दोनों हो सकते हैं तथा प्रत्ययोत्पन्न धर्म केवल नाम हो सकता है।

३. अधिपति-प्रत्यय—अधिपति-प्रत्यय दो प्रकार का होता है—आरम्मण अधिपति एवं सहजताधिपति प्रत्यय। आरम्मणाधिपति प्रत्यय में प्रत्यय धर्म एक अत्यन्त प्रिय आलम्बन होता है एवं प्रत्ययोत्पन्न धर्म उस पर उत्पन्न चित्त तथा तत्सम्प्रयुक्त चैतसिक होते है।[१] इस प्रत्यय में दो प्रतिघ चित्त, दो मोमूह चित्त एवं दु:खसहगत काय विज्ञान को छोड़कर चौरासी चित्त आदि प्रत्यय धर्म होते हैं। आठ लोभमूलक चित्त, आठ कामावचर कुसल चित्त, चार कामावचार ज्ञानसम्प्रयुक्त क्रिया चित्त और आठ लोकुत्तर चित्त उसके प्रत्योत्पन्न धर्म होते हैं।[२] इसको दर्शाने के लिए सुतसोम जातक का उदाहरण दिया गया है। राजा पोरिसाद ने मनुष्य माँस के प्रति विशिष्ठ अभिरूचि के कारण अपने राज्य का परित्याग कर वनवासी का जीवन स्वीकार किया था। यह उदाहरण इस तथ्य का परिचायक है कि अधिपति प्रत्यय में प्रत्यय धर्म का प्रत्ययोत्पन्न धर्म पर प्रभूत प्रभाव रहता है। सहजाताधिपति प्रत्यय में प्रत्यय धर्म और प्रत्ययोत्पन्न धर्म सहजात होते हैं।[३] प्रत्यय धर्म सहजात होते हुए प्रत्ययोत्पन्न धर्म पर प्रभूत प्रभाव दर्शाता है। इस क्रम में चार नाम-धर्मों का उल्लेख किया जाता है, जिन्हें छन्द, चित्त, विरिय एवं वीमंसा कहा जाता है।[४] इस प्रत्यय का स्वरूप समझने के लिए साधारणत: चक्रवर्ती राजा की उपमा दी जाती है। जैसे एक चक्रवर्ती राजा अपने पुण्य शृद्धि के द्वारा अपने देश में अकेले ही आधिपत्य कर सकता है, उसी प्रकार सहोत्पन्न चित्त एवं चैतसिक नामस्कन्ध में से कोई एक ही अधिपति होने से सहजात चित्त चैतसिकों को प्रभावित करने में समर्थ 'सहजाताधिपति प्रत्यय' होता है। जब छन्द अधिपति प्रत्यय

---

१. 'आरम्मणपच्चये वुत्तेसु आरम्मणेसु यानि आरम्मणानि अतिइट्ठानि होन्ति अतिकन्तानि अतिमनापानि गरूकतानि। तानि आरम्मणानि आरम्मणाधिपतिपच्चयो।—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ४।

२. 'अट्ठ लोभ मूलचित्तानि अट्ठ कामावचरकुसलचित्तानि चत्तारि कामावचर ञाणसम्पयुत्त-किरियचित्तानि अट्ठ लोकुत्तरचित्तानि तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना।'—वही, पृ. ५।

३. 'अधिपति सम्ययुत्ता चित्तचेतसिका च अधिपतिसमुट्ठिता चित्तजरूप धम्मा च तस्स पच्चयस्स पच्चयुधम्मा।'—वही।

४. 'अधिपति भावं पत्ता चत्तारो धम्मा अतिपतिपच्चयो, द्दन्दो चित्तं वीरियं वीमंसा।'—वही।

कार्य करता है, तब उसमें सम्प्रयुक्त धर्मों पर आधिपत्य करके उन्हें प्रभावित करने में समर्थ शक्ति आ जाती है।

४. अनन्तर-प्रत्यय—जिन धर्मों के बीच कोई अन्तर नहीं है, उसे अनन्तर कहते है। अनन्तर प्रत्यय में प्रत्यय धर्म पूर्वगामी और प्रत्ययोत्पन्न धर्म अपरगामी धर्म होता है अर्थात् प्रत्यय धर्म पूर्ववर्ती होता है एवं प्रत्ययोत्पन्न धर्म परवर्ती होता है।[१] ज्योंही प्रत्यय धर्म उत्पन्न होकर निरूद्ध होता है, त्योंही प्रत्ययोत्पन्न धर्म की उत्पत्ति होती है। प्राणी के एक जन्म में प्रतिसन्धि चित्त के प्रथम भवङ्ग चित्त अपने अनन्तर दुतिय भवङ्गचित्त से अनन्तर प्रत्यय से आवद्ध होते हैं।[२]

५. समनन्तर-प्रत्यय—इस प्रत्यय-धर्म और प्रत्ययोत्पन्न धर्म के विभाग अनन्तर-प्रत्यय के समान हैं। 'समनन्तर' के अर्थ पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि—*'सुट्टु अनन्तरट्ठेन समनन्तरो।'*[३] अर्थात् ऐसे धर्म जिसमें कोई भी अन्तर न हो। पूर्व चित्त के भंग एवं पश्चिम चित्त की उत्पत्ति के मध्य अन्तर न होना ही समनन्तर प्रत्यय है। अत: यह अनन्तर प्रत्यय का ही अधिवचन है। निरोधसमापत्ति काल में समावर्जन का पूर्ववर्त्ती नैवसंज्ञानासंज्ञायतन कुशल या क्रिया जवन चित्तोत्पाद 'प्रत्यय', समापत्ति से उठते समय या अर्हत् फल चित्त प्रत्ययोत्पन्न असंज्ञिभूमि में पहुँचने से पहले कामभूमि का च्युति चित्तोत्पाद 'प्रत्यय' कामभूमि में पुन: प्रतिसन्धि चित्तोत्पाद प्रत्ययोत्पन्न समनन्तर प्रत्यय होते हैं।[४]

६. सहजातप्रत्यय—सहजात का अर्थ है—एक साथ उत्पन्न होना। जब प्रत्यय-धर्म तथा प्रत्ययोत्पन्न धर्म एक साथ उत्पन्न होते हैं, एक साथ स्थित होते हैं एवं एक साथ निरूद्ध होते है तो उनके ऐसे सम्बन्ध को सहजात प्रत्यय कहा जाता है—**'सह जाननट्ठेन सहजातो, उपकारकट्ठेन पच्चयो'**। जैसे जब सूर्य का उदय होता है तो उसका प्रकाश, उष्णता आदि

---

१. अनन्तरे खणे निरूद्धों चित्त चेतसिक धम्मसमूहो अनन्तरपच्चयो। पच्छिमे अनन्तरे एव खणे उप्पन्ने चित्त चेतसिक धम्मसमूहो तस्स पच्चयस्स पच्चयुधम्मो।'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ८।

२. 'एकस्मिं भवे पटिसन्धि चित्तं पठमभवङ्गचित्तस्स अनन्तर पच्चयो, पठम भवङ्गचित्तस्स दुतियभवङ्गचित्तस्स अनन्तरपच्चयो ति आदिना वत्तब्बो।'—वही।

३. वही, पृ. १०.

४. वही, पृ. १०.

एक साथ उत्पन्न होते हैं, एक साथ विद्यमान रहते हैं तथा एक साथ निरूद्ध होते हैं। इनमें सहजात प्रत्यय का सम्बन्ध है।[१]

७. **अन्योन्य-प्रत्यय**—अन्योन्य-प्रत्यय का अर्थ है परस्पर उपकार करने वाली प्रत्यय। इस प्रत्यय में प्रत्यय धर्म तथा प्रत्ययोत्पन्न-धर्म परस्पर एक दूसरे के सहायक होते हैं। जैसे—चार महाभूत तथा प्रतिसन्धि के समय नाम रूप भी अन्योन्य प्रत्यय से आबद्ध रहते हैं।[२]

८. **निश्रय-प्रत्यय**—निश्रय का अर्थ है आधार। जब प्रत्यय धर्म प्रत्ययोत्पन्न धर्म का आधार हो स्थित होता है, तो उनके ऐसे सम्बन्ध को निश्रय-प्रत्यय कहते हैं। निश्रय-प्रत्यय तीन प्रकार के हैं—सहजात निश्रय, वस्तुपुरेजातनिश्रय और वस्तु आरम्मण पुरेजात निश्रय।

९. **उपनिश्रय-प्रत्यय**—अधिक निश्रय ही उपनिश्रय है। इसका अर्थ बलवान कारण है। इस प्रत्यय के अन्तर्गत प्रत्ययधर्म एक विशिष्ट निश्रय के रूप में विद्यमान रहता है। वह उस रूप से विद्यमान होते हुए प्रत्योत्पन्न की स्थिति में एक सबल कारण का काम करता है। इसके तीन भेद होते हैं—आलम्बनोपनिश्रय, अनन्तरूपनिश्रय तथा प्रकृत्युपनिश्रय।

१०. **पुरेजात-प्रत्यय**—पुरेजात प्रत्यय में प्रत्यय धर्म प्रत्ययोत्पन्न धर्मों से पहले उत्पन्न होने वाले धर्म हैं। जिस प्रकार सूर्य और चन्द्र आज तक विद्यमान रहते हुए अपने अनन्तर उत्पन्न होनेवाले धर्मों का प्रकाश देकर उपकार करते हैं, उसी प्रकार प्रत्ययोत्पन्न धर्मों से पूर्व उत्पन्न होकर निरूद्ध न होते हुए स्थितिक्षण में विद्यमान रहकर अपने अनन्तर उत्पन्न चित्त-चैतसिकों का उपकार करने में पुरेजात प्रत्यय है।

११. **पश्चाज्जात-प्रत्यय**—जब प्रत्यय धर्म पश्चाज्जात होता है, तथा प्रत्ययोत्पन्न धर्म पूर्व उत्पन्न होता है तो उत्पत्ति की ऐसी प्रक्रिया की पृष्ठभूमि में उनके मध्य सम्बन्ध को पश्चाज्जात प्रत्यय कहा जाता है। जैसे—शरीर की उत्पत्ति पहले हो जाती है और उसके बाद उसमें चित्त-चेतसिक पैदा होते हैं। अत: दोनों के बीच का सम्बन्ध पश्चाज्जात-प्रत्यय का है।[३]

---

१. 'यथा सूरियो नाम उदयन्तो सूरियातापे च सूरिया लोके च अत्तना सहेव जनयत्तो उदेति।'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ११.

२. 'सहजाता चत्तारो महाभूता अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयधम्मा च होन्ति अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयुपन्नधम्मा च'—वही, पृष्ठ. १२।

३. 'पच्छिमं पच्छिमं पच्चुप्पन्नं चित्तं पुरेजातस्स पच्चुप्पन्नस्स चतु समुट्ठानिकस्स रूपकायस्स वुड्ढिविरूलहया पच्छाजातपच्चयो'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. १८।

१२. आसेवन-प्रत्यय—पुनः पुनः करना या प्रवृत होना आसेवन है। आसेवन-प्रत्यय ऐसे सम्बन्ध का नाम है, जिनमें प्रत्यय धर्म की पुनः पुनः आवृत्ति से प्रत्ययोत्पन्न-धर्म में विशेषता की अभिवृद्धि होती है। पट्ठानुद्देसदीपनी में कहा गया है—*'उपरूपरिपगुणभावगुणभाववड्ढनत्थञ्च परिवासग्गाहापनट्ठेन।'*[१] उदाहरणतः प्रत्येक कुशल-धर्म की उत्पत्ति किसी पूर्वगामी कुशल धर्म के आसेवन या सतत अभ्यास से होती है।

१३. कर्म-प्रत्यय—कर्म शब्द यहाँ कुशल एवं अकुशल कर्मों का द्योतक है। भगवान बुद्ध ने चेतना को कर्म बतलाया है—*'चेतनाहं, भिक्खवे, कम्मं वदामि'*।[२] चेतना एक मानसिक मूलभूत प्रवृत्ति है, जो किसी कर्म को करने के लिए उत्पन्न होती है। चेतना के प्रादुर्भाव होने से ही मनुष्य कुशल अथवा अकुशल कर्म करता है। इस प्रकार चेतना के कारण चेतना सम्प्रयुक्त चित्त चैतसिक तथा तत्समुत्थान रूप की उत्पत्ति होती है। ऐसी दशा में चेतना प्रत्यय धर्म है एवं तत्सम्प्रयुक्त चित्त, चैतसिक एवं तत्समुत्थान रूप प्रत्ययोत्पन्न धर्म है। इनके मध्य स्थित सम्बन्ध का नाम कर्म-प्रत्यय है।[३]

१४. विपाक-प्रत्यय—विपाक-प्रत्यय ऐसा सम्बन्ध है, जिसमें प्रत्ययधर्म तथा प्रत्योत्पन्न धर्म दोनों विपाक होते हैं। जैसे चारो अरूपी विपाक स्कन्ध परस्पर विपाक-प्रत्यय से आबद्ध होते हैं। विपाक चित्त व्यापार रहित होकर उपशमस्वभाव होते है।[४]

१५. आहार-प्रत्यय—अपने-अपने प्रत्ययोत्पन्न धर्मों को धारण करनेवाले को 'आहार' कहते है। आहार-प्रत्यय ऐसा सम्बन्ध है, जिसमें प्रत्ययधर्म चार प्रकार के आहारों में से कोई एक होता है तथा प्रत्ययोत्पन्न-धर्म उनसे सम्पोषित चित्त, चैतसिक या रूप होता है। इन आहार प्रत्यय धर्मों में केवल उपष्टम्मन शक्ति होती है और प्रत्ययोत्पन्न धर्मों को उत्पन्न करने में समर्थ जनक-शक्ति होती है। जनक शक्ति से उपकार करने में यहाँ केवल उत्पाद मात्र ही इष्ट नहीं हैं; अपितु निरन्तर प्रवृत्त होने के लिए उपष्टम्मन भी अभिप्रेत होने से उपष्टम्मन शब्द का प्रयोग किया गया है।[५]

१. पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. १८। २. अ.नि. भाग ।।।, पृ. ४१५।

३. 'किरियाविसेसट्ठेन कम्मं। चेतना हि किरियाविसेसो होति सब्बकम्मेसु जेट्ठकत्ता'— पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. २१।

४. 'विपाक धम्मा नाम निरूस्साहा निब्यापारा हुत्वा सब्बसो सन्तरूपा होन्ति'।— पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. २३।

५. 'जननकिच्चयुत्तोपि आहारो उपत्थम्मनकिच्चपधानो होती ति'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. २३।

१६. इन्द्रिय-प्रत्यय—जो धर्म ऐश्वर्यवाला या आधिपत्य करनेवाला होता है, वह इन्द्रिय है।[१] इन्द्रिय प्रत्यय ऐसा प्रत्यय है जिसमें प्रत्यय धर्म रूप तथा नाम होता है, एवं प्रत्ययोत्पन्न-धर्म केवल नाम हो सकता है तथा नाम रूप भी हो सकता है। जैसे—लोभमूल लोभमूल प्रथम चित्त, चैतसिक एवं चित्तज रूप उत्पन्न होते समय उसमें आनेवाला जीवित 'इन्द्रिय प्रत्यय' है।

१७. ध्यान-प्रत्यय—ध्यान-प्रत्यय ऐसे सम्बन्ध का नाम है जिसमें प्रत्यय धर्म सात प्रकार के ध्यानाङ्गों में एक होता है तथा प्रत्ययोत्पन्न-धर्म कोई चित्त, उसके साथ उत्पन्न चैतसिक या तत्समुत्थित रूप होता है। इसके अन्तर्गत द्विपञ्चविज्ञान की गणना नहीं है।[२]

१८. मार्ग-प्रत्यय—मार्ग दुर्गति भव से सुगतिभव एवं संक्लिष्ट भाग से पवित्र भाग में पहुँचाते है।[३] ये मार्ग बारह प्रकार के हैं जिनमें जिस किसी मार्ग के अङ्ग के योग से चित्त चैतसिकों एवं रूप की उत्पत्ति होतीहै। जैसे सम्यक् दृष्टि से निर्वाण की प्राप्ति होती है।

१९. सम्प्रयुत्त-प्रत्यय—सम्प्रयुक्त-प्रत्यय ऐसे प्रत्यय का नाम है, जिसमें प्रत्यय-धर्म तथा प्रत्ययोत्पन्न-धर्म दोनों नाम होते हैं, एवं एकाकार को प्रवृत्त होते हैं। जैसे—चार अरूपी स्कन्ध।

२०. विप्रयुत्त प्रत्यय—विप्रयुत्त-प्रत्यय सम्प्रयुत्त-प्रत्यय के विपरीत है। जैसे—रूपी एवं अरूपी स्कन्ध। अतः इस प्रत्यय में प्रत्ययधर्म नाम तथा प्रत्ययोत्पन्न धर्म रूप अथवा प्रत्ययधर्मं रूप एवं प्रत्ययोत्पन्न धर्म नाम हो सकते हैं।

२१. अस्ति-प्रत्यय—जब प्रत्यय धर्म के विद्यमान होने से प्रत्ययोत्पन्न धर्म के विद्यमान होने की स्थिति देखी जाय तो उनके मध्य अस्ति-प्रत्यय का सम्बन्ध है। जैसे—चार महाभूत अथवा चित्त, चैतसिक तदुत्पन्न रूप।

---

१. 'इस्सरियट्ठेन इन्द्रियं। अत्तनो अत्तनो पच्चयुप्पन्नेसु धम्मेसु इस्सरिय'—वही, पृ. २४।

२. 'सत्त झानङ्गानि झानपच्चयो, वितक्को विचारो पीति सोमनस्सं दोमनस्सं उपेक्खा एकग्गता। तेहि सहजाता पञ्चविञ्ञाणवज्जिता चित्त चेतसिकाधम्मा च तस्स पच्चयुप्पन्ना'—पट्ठानुद्देसदीपनी—पृ. २६.

३. 'सुगतिदुग्गतिनिब्बान दिसादेस सम्पापनट्ठेन मग्गो।'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. २७.

२२. नास्ति-प्रत्यय—जब प्रत्यय-धर्म स्वयं निरूद्ध होकर प्रत्ययोत्पन्न धर्म की उत्पत्ति में सहायक होता है, तो उसे नास्ति-प्रत्यय कहा जाता है। इसमें प्रत्यय धर्म एवं प्रत्ययोत्पन्न धर्म दोनों नाम धर्म होते हैं।

२३. विगत-प्रत्यय—यह नास्ति-प्रत्यय के समान है।

२४. अविगत प्रत्यय—यह अस्ति-प्रत्यय के समान है।

पट्ठानुद्देसदीपनी के दूसरे परिच्छेद में प्रत्ययों के स्वरूप पर विचार करते हुए पुनः ऐसा दर्शाया गया है कि कौन-कौन प्रत्यय स्वरूपतः सदृश है और कौन-कौन परस्पर विरुद्ध स्वभाव वाले हैं। सहजातजाति में १५ प्रत्यय होते है—४ महासहजात, ४ मध्यम सहजात और ७ क्षुद्रकसहजात।[१] प्रत्युत्पन्नकाल में १५ प्रत्यय होते हैं।[२] अतीतकाल प्रत्ययों में सभी अनन्तरजातिक और सभी नानाक्षणिक कर्म होते हैं।[३] त्रैकालिक एवं कालविमुक्त तीन होते हैं—आलम्बन, अधिपति एवं उपनिश्रय।[४] धर्मालम्बन में परिगणित निर्वाण एवं प्रज्ञप्ति आलम्बन काल विमुक्त आलम्बन है और इन्हें असंस्कृत धर्म के रूप में जानना चाहिए—**'निब्बानं च पञ्ञत्ति चा ति इमे द्वे धम्मा अप्पच्चया नाम असङ्खता नाम'**।[५]

प्रस्तुत ग्रन्थ के तीसरे परिच्छेद में प्रत्ययों के घटना नय के सम्बन्ध में कहा गया है। सर्वप्रथम पाँच विज्ञानों में प्रत्ययों के उत्पत्ति एवं घटना के बारे में कहा गया है। फिर अहेतुक चित्तों के उत्पाद, अकुशल चित्त उत्पाद, रूप कलाप आदि में प्रत्ययों के घटना का जिक्र किया गया है। अंत में 'पट्ठान' शब्द के अर्थ का वर्णन किया गया है।[६]

---

१. 'पञ्चदस सहजातजातिका होन्ति, चत्तारो महासहजाता, चत्तारो मज्झिमसहजाता सत्त खुद्दकसहजाता'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. २९।

२. 'तत्थ सब्बे सहजातजातिका च सब्बे पुरेजात जातिका सब्बे पच्छाजात जातिका रूपाहारो रूपजीवितिन्द्रियं ति इमे पच्चुप्पन्नपच्चया नाम'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ३०।

३. 'सब्बे अनन्तरजातिका सब्बं नानाक्खणिक कम्मं ति इमे अतीतपच्चया नाम'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ३०।

४. 'आरम्मणं पकतूपनिस्सययोति इमे तेकालिका च निब्बानपञ्ञतीनं वसेन कालविमुत्ता च होन्ति'—पट्ठानुद्देसदीपनी, पृ. ३०।

५. वही।

६. वही, पृ. ३९।

सम्पादन-शैली

इस ग्रन्थ का सम्पादन बुद्धसासन समिति प्रेस, रंगून, बर्मा द्वारा सन् १९६६ में बर्मी लिपि में प्रकाशित लेदि दीपनी संग्रह, भाग एक संस्करण को आधार बना कर किया गया है। इस संस्करण की पृष्ठ संख्या को भी बर्मी लिपि में प्राप्त संस्करण के लिए (B) के रूप में दे दी गयी है। अभिधम्म से सम्बन्धित ग्रन्थों, अट्ठकथाओं एवं मूलटीकाओं से जगह-जगह पर यथासंभव टिप्पणियाँ देने का प्रयास किया गया है।

मुझे प्रसन्नता है कि श्रमण विद्या संकाय के अध्यक्ष प्रो. ब्रह्मदेव नारायण शर्मा की प्रेरणा से इस लघु ग्रन्थ के सम्पादन और उद्धार कार्य का सौभाग्य मुझे मिला। अल्पज्ञतावश इसमें जो भी त्रुटियाँ रह गयी हों, विद्वत्समाज से अनुरोध है कि मुझे सूचित करने की कृपा करें ताकि भविष्य में उनका परिमार्जन हो सके। प्रस्तुत लघु ग्रन्थ का यह संस्करण स्थविरवादी अभिधर्म के अध्येताओं के लिए उपयोगी सिद्ध हो, इसी कामना से इस ग्रन्थ का मूलपाठ प्रस्तुत है।

विमलेन्द्र कुमार

सङ्केत-विवरण

अट्ठ. = **अट्ठसालिनी** (सं.) पी. वी. बापट एवं आर. डी. वाडेकर, पूना, १९४२.

अ. नि. = **अङ्गुत्तरनिकायो**, भाग ३, (सं.) भिक्षु जगदीश कश्यप, नालन्दा संस्करण, १९६० ई.

अभिधम्मावतार = **अभिधम्भावतारों** (सं.) महेश तिवारी, पालि परिवेण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९८८ ई.

अ. वि. टीका = **अभिधम्मत्थसङ्गहो** (अभिधम्मत्थविभावनीटीका सहित) (सं.) भदन्त रेवतधर्म शास्त्री, बौद्ध स्वाध्यायसत्र, वाराणसी संस्करण, १९६५ ई.

द. = द्रष्टव्य

प. अ. = **पञ्चप्पकरण-अट्ठकथा** (ततियो भागो) पट्ठानअट्ठकथा (सं) महेश तिवारी, नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा, १९७२.

प. मू. टीका = **पञ्चपकरण-मूलटीका** (पट्ठानपकरण-मूलटीका), विपश्यना विशोधन विन्यास, इगतपुरी, १९८८ ई.

मो. वि. = **मोहविच्छेदनी** (सं.) ए. पी. बुद्धदत्त एवं ए.के. वार्डर, पालि टेक्स्ट सोसाइटी, लंदन संस्करण, १९६१ ई.

विसुद्धिमग्ग = **विसुद्धिमग्गो** (सं.) द्वारिका दास शास्त्री, बौद्ध भारती, वाराणसी, १९७७ ई.

M. B. = *The Manuals of Buddhism (The Expositions of the Buddha-Dhamma* by Mahathera Ledi Sayadaw, the English Editorial Board, Department of Religious Affairs, Rangoon, Burma 1981.

पट्ठानुद्देसदीपनी की विषय-सूची

●

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

पट्ठानुद्देसदीपनी

१. पच्चयत्थदीपना नाम पठमो परिच्छेदो

१. हेतुपच्चयो

[B 465] कतमो हेतुपच्चयो। लोभो हेतुपच्चयो। दोसो, मोहो, अलोभो, अदोसो, अमोहो हेतु पच्चयो।

कतमे धम्मा हेतुपच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना। लोभ सहजाता चित्तचेतसिका धम्मा च रूपकलापाधम्मा च दोससहजाता मोहसहजाता अलोभसहजाता अदोससहजाता अमोहसहजाता चित्तचेतसिका धम्मा च रूपकलापा धम्मा च हेतुपच्चयतो उप्पन्ना हेतुपच्चयुप्पन्ना धम्मा।

सहजातरूपकलापा नाम सहेतुकपटिसन्धिक्खणे कम्मजरूपानि च पवत्तिकाले सहेतुकचित्तजरूपानि च। तत्थ पटिसन्धिक्खणो नाम पटिसन्धिचित्तस्स उप्पादक्खणो। पवत्तिकालो नाम पटिसन्धिचित्तस्स ठितिक्खणतो पट्ठाय याव चुतिकालं वुच्चति।

केनट्ठेन हेतु, केनट्ठेन पच्चयोति। मूलट्ठेन हेतु, उपकारकट्ठेन पच्चयोति[1]। तत्थ मूलयमके वुत्तानं लोभादीनं मूलधम्मानं मूलभावो मूलट्ठो नाम। सो मूलट्ठो मूलयमकदीपनियं अम्हेहि रुक्खोपमाय दीपितोयेव।

अपि च एको पुरिसो एकिस्सं इत्थियं पटिबद्ध चित्तो होति। सो याव तं चित्तं न जहति, ताव तं इत्थिं आरब्भ तस्स पुरिसस्स लोभसहजातानि कायवचीमनोकम्मानि च लोभसमुट्ठितानि चित्तजरूपानि च चिरकालंपि पवत्तन्ति। सब्बानि च तानि चित्तचेतसिकरूपानि तस्सं इत्थियं रज्जनलोभमूलकानि होन्ति। सो लोभो तेसं मूलट्ठेन हेतु च, उपकारकट्ठेन पच्चयो च। तस्मा हेतुपच्चयो। एस नयो सेसानि रज्जनीयवत्थूनि आरब्भरज्जनवसेन उप्पन्नेसु लोभेसु, दुस्सनीयवत्थूनि

---

१. प.अ., पृ. ७१; मो.वि., पृ. ३२२; 'उपकारकट्ठो पच्चयट्ठो'—विसुद्दिमग्ग, पृ. ४४४-४४५; द्र. विसुद्धिमग्ग, पृ. ४५०; हेतु हुत्वा पच्चयो, हेतुभावेन पच्चयो ति वुत्तं होति। मूलट्ठेन हेतु, उपकारकट्ठेन पच्चयो ति सङ्खेपतो मूलट्ठेन उपकारको चम्मो हेतुपच्चयो'। अ.वि.टीका, पृ. २१८।

आरब्भ दुस्सनवसेन उप्पन्नेसु दोसेसु, मुय्हनीयवत्थूनि आरब्भ मुय्हनवसेन उप्पन्नेसु मोहेसु च।

[B 466] तत्थ यथा रुक्खस्स मूलानि सयं अन्तोपथवियं सुट्ठु पतिट्ठहित्वा पथविरसञ्च आपोरसञ्च गहेत्वा तं रुक्खं याव अग्गा अभिहरन्ति, तेन रुक्खो चिरकालं वड्ढमानो तिट्ठति। तथा लोभो च तस्मिं तस्मिं वत्थुम्हि रज्जनवसेन सुट्ठु पतिट्ठहित्वा तस्स तस्स वत्थुस्स पियरूपरसञ्च सातरूपरसञ्च गहेत्वा सम्पयुत्तधम्मे याव कायवचीवितिक्कमा अभिहरति, कायवीतिक्कमं वा वचीवीतिक्कमं वा पापेति। तथा दोसो च दुस्सनवसेन अप्पियरूपरसञ्च असातरूपरसञ्च गहेत्वा, मोहो च मुय्हनवसेन नानारम्मणेसु निरत्थकचित्ताचाररसं वड्ढेत्वाति वत्तब्बं। एवं अभिहरन्ता तयो धम्मा रज्जनीयादीसु वत्थूसु सम्पयुत्तधम्मे मोदमाने पमोदमाने करोन्तो विय चिर कालं पवत्तेन्ति। सम्पयुत्तधम्मा च तथा पवत्तन्ति। सम्पयुत्त धम्मेसु च तथा पवत्तमानेसु सहजातरूपकलापापि तथा पवत्तन्तियेव। तत्थ सम्पयुत्तधम्मे अभिहरतीति द्वे पियरूप सातरूपरसे सम्पयुत्तधम्मानं सन्तिकं पापेतीति अत्थो।

सुक्कपक्खे सो पुरिसो यदाकामेसु आदीनवं पस्सति, तदा सो तं चित्तं जहति, तं इत्थिं आरब्भ अलोभो सञ्जायति। पुब्बे यस्मिं काले तं इत्थिं आरब्भ लोभमूलकानि असुद्धानि कायवचीमनोकम्मानि वत्तन्ति। इदानि तस्मिं कालेपि अलोभमूलकानि सुद्धानि कायवचीमनोकम्मानि वत्तन्ति। पब्बजित सीलसंवरानि वा झानपरिकम्मानि वा अप्पनाझानानि वा वत्तन्ति। सो अलोभो तेसं मूलट्ठेन हेतु च होति, उपकारकट्ठेन पच्चयो च। तस्मा हेतुपच्चयो। एस नयो सेसेसु लोभ पटिपक्खेसु अलोभेसु, दोसपटिपक्खेसु अदोसेसु, मोह पटिपक्खेसु अमोहेसु च।

तत्थ रुक्खमूलानि विय अलोभो लोभनेय्यवत्थूसु लोभं पहाय लोभविवेकसुखरसं वड्ढेत्वा तेन सुखेन सम्पयुत्तधम्मे मोदमाने पमोदमाने करोन्तो विय याव झानसमापत्तिसुखा वा याव मग्गफलसुखा वा वड्ढापेति। तथा अदोसो च दोसनेय्यवत्थूसु दोसविवेकसुखरसं वड्ढेत्वा, अमोहो च मोहनेय्यवत्थूसु मोहविवेकसुखरसं वड्ढेत्वाति वत्तब्बं। एवं वड्ढापेन्ता तयो धम्मा कुसलेसु धम्मेसु सम्पयुत्तधम्मे मोदमाने पमोदमाने करोन्तो विय चिर कालंपि पवत्तेन्ति। सम्पयुत्तधम्मा च तथा पवत्तन्ति। सम्पयुत्तधम्मेसु च तथा पवत्तमानेसु सहजातरूपकलापापि तथा पवत्तन्तियेव।

[B 467] तत्थ लोभविवेकसुखरसन्ति विविच्चनं विगमनं विवेको। लोभस्स विवेको लोभविवेको। लोभविवेके सुखं लोभविवेकसुखं। लोभविवेकं पटिच्च

उप्पन्नसुखन्ति वुत्तं होति। तदेव रसो लोभविवेकसुखरसोति समासो। अयं अभिधम्मे पट्ठाननयो।

सुत्तन्तनयो पन अविज्जासङ्खातो मोहो च तण्हासङ्खातो लोभो चाति द्वे धम्मा सब्बेसंपि वट्टदुक्खधम्मानं मूलानि होन्ति। दोसो पन लोभस्स निस्सन्दभूतं पापमूलं होति। विज्जासङ्खातो अमोहो च निक्खमधातुसङ्खातो अलोभो चाति द्वे धम्मा विवट्टधम्मानं मूलानि होन्ति। अदोसो पन अलोभस्स निस्सन्दभूतं कल्याणमूलं होति। एवं छब्बिधानि मूलानि सहजातानं पि असहजातानं पि नामरूपधम्मानं पच्चया होन्तीति। अयं सुत्तन्तेसु नयो।

।। हेतुपच्चयदीपना निट्ठिता।।

२. आरम्मणपच्चयो

कतमो आरम्मणपच्चयो। सब्बेपि चित्तचेतसिका धम्मा सब्बेपि रूपधम्मा सब्बं पि निब्बानं सब्बापि पञ्ञत्तियो आरम्मणपच्चयो। न हि सो नाम एकोपि धम्मो अत्थि, यो चित्त चेतसिकानं आरम्मणं न होति। सङ्खेपतो पन आरम्मणं छब्बिधं होति, रूपारम्मणं सद्दारम्मणं गन्धारम्मणं रसारम्मणं फोट्ठब्बारम्मणं धम्मारम्मणन्ति।

कतमे धम्मा आरम्मणपच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना। सब्बेपि चित्त चेतसिकाधम्मा आरम्मणपच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना। न हि किञ्चि चित्तं नाम अत्थि, यं चित्तं भूतेन वा अभूतेन वा आरम्मणेन विना पवत्तति।

तत्थ पच्चुप्पन्नं रूपारम्मणं दुविधस्स चक्खुविञ्ञाणचित्तस्स आरम्मण-पच्चयो। पच्चुप्पन्नं सद्दारम्मणं दुविधस्स सोतविञ्ञाण चित्तस्स। पच्चुप्पन्नं गन्धारम्मणं दुविधस्स घानविञ्ञाणचित्तस्स। पच्चुप्पन्नं रसारम्मणं दुविधस्स जिव्हविञ्ञाणचित्तस्स। पच्चुप्पन्नं तिविधं फोट्ठब्बारम्मणं दुविधस्स कायविञ्ञाण-चित्तस्स। पच्चुप्पन्नानि तानि पञ्चारम्मणानि तिविधस्स मनोधातुचित्तस्स आरम्मणपच्चयो। सब्बानि तानि अतीतानागतपच्चुप्पन्नानि पञ्चारम्मणानि वा सब्बानि तेकालिकानि कालविमुत्तानि धम्मारम्मणानि वा छ सत्ततिविधानं मनोविञ्ञाणचित्तानं यथारहं आरम्मणपच्चयो।

केनट्ठेन आरम्मणं, केनट्ठेन पच्चयोति। चित्त चेतसिकेहि आलम्बितब्बट्ठेन आरम्मणं, उपकारकट्ठेन पच्चयोति।

[B 468] आलम्बितब्बट्ठेनाति चेत्थ आलम्बणकिरिया नाम चित्त चेतसिकानं आरम्मणग्गहणकिरिया, आरम्मणुपादान किरिया।

यथा हि लोके अयोधातुं कामेति इच्छतीति अत्थेन अयोकन्तको नाम लोहधातुविसेसो अत्थि। सो अयोखन्धसमीपं सम्पत्तो तं अयोखन्धं कामेन्तो विय इच्छन्तो विय अयोखन्धाभिमुखो चञ्चलति। सयं वा तं अयोखन्धं उपगच्छति। अयोखन्धं वा अत्ताभिमुखं आकड्ढति, अयोखन्धो तदभिमुखो चञ्चलति, तं वा उपगच्छति। अयं अयोकन्तकस्स आलम्बणकिरिया नाम। एवमेव चित्तचेतसिकानं आरम्मणेसु आलम्बणकिरिया दट्ठब्बा। न केवलं आरम्मणेसु आलम्बण मत्तं होति। अथ खो चित्तचेतसिका धम्मा सत्तसन्ताने उप्पज्जमाना छसु द्वारेसु आरम्मणानं आपातागमने एव खणे खणे उप्पज्जन्ति। उप्पज्जित्वा च खणे खणे निरुज्झन्ति।

यथा तं भेरितले भेरिसद्दा उप्पज्जमाना तत्थ तत्थ हत्थेन पहरणकाले एव खणे खणे उप्पज्जन्ति, उप्पज्जित्वा च खणे खणे निरुज्झन्ति। वीणासद्दा उप्पज्जमाना वीणातन्तीसु तत्थ तत्थ वीणादन्तकेन पहरणकाले एव खणे खणे उप्पज्जन्ति, उप्पज्जित्वा च खणे खणे निरुज्झन्तीति। निद्दायन्तस्स भवङ्गचित्तप्पवत्ति कालेपि पुब्बभवे मरणासन्नकाले छसु द्वारेसु आपातमागतानि कम्म कम्मनिमित्त गतिनिमित्तानि एव भवङ्गचित्तानं आरम्मणपच्चयोति।

।। आरम्मणपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

३. अधिपतिपच्चयो

दुविधो अधिपतिपच्चयो आरम्मणाधिपतिपच्चयो सहजाताधिपतिपच्चयो च। तत्थ कतमो आरम्मणाधिपतिपच्चयो। आरम्मणपच्चये वुत्तेसु आरम्मणेसु यानि आरम्मणानि अतिइट्ठानि होन्ति अतिकन्तानि अतिमनापानि गरुकतानि। तानि आरम्मणानि आरम्मणाधिपतिपच्चयो। तत्थ अतिइट्ठानीति सभावतो इट्ठानि वा होन्तु अनिट्ठानि वा, तेन तेन पुग्गलेन अतिइच्छितानि आरम्मणानि इध अतिइट्ठानि नाम।

तानि पन धम्मतो द्वे दोसमूलचित्तुप्पादे च द्वे मोमूहचित्तुप्पादे च दुक्खसहगतकायविञ्ञाणचित्तुप्पादे च ठपेत्वा अवसेसानि सब्बानि कामावचरचित्तचेतसिकानि च रूपारूपलोकुत्तरचित्तचेतसिकानि च सब्बानि अतिइट्ठरूपानि च होन्ति।

[B 469] तेसुपि कामारम्मणानि गरुं करोन्तस्सेव आरम्मणाधिपतिपच्चयो। गरुं अकरोन्तस्स आरम्मणाधिपतिपच्चयो न होति। झानलाभिनो पन अत्तना पटिलद्धानि महग्गतझानानि अरियसावका च अत्तना पटिलद्धे लोकुत्तरधम्मे गरुं अकरोन्ता नाम नत्थि।

कतमे धम्मा तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना। अट्ठ लोभ मूलचित्तानि अट्ठ कामावचरकुसलचित्तानि चत्तारि कामावचर ञाणसम्पयुत्तकिरियचित्तानि अट्ठ लोकुत्तरचित्तानि तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना।

तत्थ लोकियानि छळारम्मणानि लोभमूलचित्तानं पच्चयो। सत्तरस लोकियकुसलानि चतुन्नं ञाणविप्पयुत्त कुसलानं। तानि कुसलानिचेव हेट्ठिममग्गफलानि च निब्बानञ्च चतुन्नं ञाणसम्पयुत्तकुसलानं। अरहत्तमग्गफलानि च निब्बानञ्च चतुन्नं ञाणसम्पयुत्तकिरियानं। निब्बानं अट्ठन्नं लोकुत्तर चित्तानन्ति[१]।

केनट्ठेन आरम्मणं, केनट्ठेन अधिपति। आलम्बितब्बट्ठेन आरम्मणं, आधिपच्चट्ठेन अधिपति[२]। को आधिपच्चट्ठो। अत्तानं गरुं कत्वा पवत्तेसु चित्तचेतसिकेसु इस्सरभावो आधिपच्चट्ठो। लोके सामिका विय आरम्मणाधिपति-पच्चय धम्मा दट्ठब्बा, दासा विय पच्चयुप्पन्नधम्मा दट्ठब्बा।

सुतसोमजातके राजा पोरिसादो मनुस्समंसं गरुं करोन्तो मनुस्समंसहेतु रज्जं पहाय अरञ्ञे विचरति। तत्थ मनुस्समंसे गन्धरस धम्मा आरम्मणाधिपतिपच्चयो। रञ्ञो पोरिसादस्स लोभमूलचित्तं पच्चयुप्पन्नधम्मो। राजा सुतसोमो सच्चधम्मं गरुं कत्वा सच्चधम्महेतु रज्जसम्पत्तिञ्च ञाति सङ्घञ्च अत्तनो जीवितञ्च छड्टेत्वा पुन रञ्ञो पोरिसादस्स हत्थं उपगतो। तत्थ सच्चधम्मो आरम्मणाधिपतिपच्चयो। रञ्ञो सुतसोमस्स कुसलचित्तं पच्चयुप्पन्नधम्मो। एसनयो सब्बेसु गरुकतेसु आरम्मणेसु।

कतमो सहजाताधिपतिपच्चयो। अधिपतिभावं पत्ता चत्तारो धम्मा अधिपतिपच्चयो, छन्दो चित्तं वीरियं वीमंसा[३]।

कतमे धम्मा तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना। अधिपति सम्पयुत्ता चित्तचेतसिका च अधिपतिसमुट्ठिता चित्तजरूपधम्मा च तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना।

केनट्ठेन सहजातो, केनट्ठेन अधिपति।

---

१. 'लोकुत्तरकुसलानि पन कामावचर ञाणसम्पयुत्त जवनानं एव आरम्मणाधिपतिपच्चया होन्ति, निब्बानं पन तेसं चेव लोकुत्तरकुसलविपाकानं च ति वेदितब्बं ति'।
(मो.वि., पृ.३२३)

२. 'जेट्ठकट्ठेन उपकारको धम्मो अधिपतिपच्चयो'। (प.अ., पृ. ७२)

३. 'तत्थ सहजाताधिपति छन्द-चित्त-विरियविमंसानं वसेन चतुब्बिधो'।
(अभिधम्मावतार, पृ. १९८)

[B 470] सहुप्पादनट्ठेन सहजातो, सहजातानं धम्मानं अभिभवनट्ठेन अधिपति। तत्थ सहुप्पादनट्ठेनाति यो धम्मो सयं उप्पज्जमानो अत्तना सहजातधम्मे च अत्तना सहेव उप्पादेति, तस्स अत्तना सहजातधम्मानं सहुप्पादनट्ठेन।

अभिभवनट्ठेनाति अज्झोत्थरणट्ठेन। यथा राजा चक्कवत्ति अत्तनो पुञ्ञिद्धिया सकलदीपवासिनो अभिभवन्तो अज्झोत्थरन्तो अत्तनो वसे वत्तापेति, सकलदीपवासिनो च तस्स वसे वत्तन्ति। तथा अधिपतिट्ठानपत्ता इमे चत्तारो धम्मा अत्तनो अत्तनो विसये सहजातधम्मे अभिभवन्ता अज्झोत्थरन्ता अत्तनो वसे वत्तापेन्ति, सहजातधम्मा च तेसं वसे वत्तन्ति। यथा वा सिलाथम्भे पथविधातु उदकक्खन्धे आपोधातु अग्गिक्खन्धे तेजोधातु वातक्खन्धे वायोधातु अत्तना सहजाता तिस्सो धातुयो अभिभवन्ता अज्झोत्थरन्ता अत्तनो गतिं गमापेन्ति, सहजातधातुयो च तासं गतिं गच्छन्ति, एवमेव अधिपतिट्ठानपत्ता इमे चत्तारो धम्मा अत्तनो बलेन सहजातधम्मे अत्तनो गतिं गमापेन्ति, सहजातधम्मा च तेसं गतिं गच्छन्ति, एवं सहजातधम्मानं अभिभवनट्ठेन।

एत्थ वदेय्युं, यदि सहजातधम्मानं अभिभवनट्ठेन अधिपतिनाम सिया। एवं सति तिट्ठतु छन्दो, लोभो एव अधिपतिनाम सिया, सो हि छन्दतोपि बलवतरो हुत्वा सहजातधम्मे अभिभवन्तो पवत्ततीति। वुच्चते, बालपुथुज्जनेसु एव लोभो छन्दतो बलवतरो होति, पण्डितेसु पन छन्दो एव लोभतो बलवतरो हुत्वा सहजातधम्मे अभिभवन्तो पवत्तति। सचे हि लोभो एव छन्दतो बलवतरो सिया, कथं इमे सत्ता लोभस्स हत्थगता भवसम्पत्ति भोगसम्मत्तियो छट्टेत्वा नेक्खम्मधम्मे पूरेत्वा वट्टदुक्खतो निस्सरेय्युं। यस्मा पन छन्दो एव लोभतो बलवतरो होति, तस्मा इमे सत्ता लोभस्स हत्थगता भवसम्पत्ति भोगसम्पत्तियो छट्टेत्वा नेक्खम्मधम्मे पूरेत्वा वट्टदुक्खतो निस्सरन्ति। तस्मा छन्दो एव लोभतो बलवतरो होति, छन्दो एव अधिपति, न लोभोति। एस नयो दोसादीसुपीति।

तत्थ लोके महन्तेसु सुदुक्करेसु पुरिसकम्मेसु पच्चुपट्ठितेसु इमे चत्तारो धम्मा कम्मसिद्धिया संवत्तन्ति। कथं।

हीनच्छन्दा बहुज्जना महन्तानि सुदुक्करानि पुरिसकम्मानि दिस्वा निवत्तच्छन्दा होन्ति। कातुं न इच्छन्ति, अम्हाकं अविसयोति निरपेक्खा ठपेन्ति। छन्दाधिको पन तादिसानि पुरिसकम्मानि दिस्वा उग्गतच्छन्दो होति, अतिविय कातुं [B 471] इच्छति, मम विसयो एसोति अधिट्ठानं गच्छति। सो छन्देन अभिकङ्खितो याव तं कम्मं न सिज्झति, ताव अन्तरा तं कम्मं छट्टेतुं न सक्कोति। एवञ्च सति अतिमहन्तं पि तं कम्मं एकस्मिं काले सिद्धं भविस्सति।

हीनवीरिया च बहुज्जना तादिसानि कम्मानि दिस्वा निवत्त वीरिया होन्ति, इदं मे कम्मं करोन्तस्स बहुं कायदुक्खं वा चेतोदुक्खं वा भविस्सतीति निवत्तन्ति। वीरियाधिको पन तादिसानि पुरिसकम्मानि दिस्वा उग्गतवीरियो होति, इदानेव उट्ठहित्वा कातुं इच्छति। सो चिरकालंपि तं कम्मं करोन्तो बहुं कायदुक्खं वा चेतोदुक्खं वा अनुभवन्तोपि तस्मिं वीरिय कम्मे ननिब्बिन्दति, महन्तेन कम्मवीरियेन विना भवितुं न सक्कोति, तादिसेन वीरियेन रत्तिदिवं खेपेन्तो चित्तसुखं विन्दति। एवञ्च सति अतिमहन्तं पि तं कम्मं एकस्मिं काले सिद्धं भविस्सति।

हीनचित्ता च बहुज्जना तादिसानि कम्मानि दिस्वा निवत्तचित्ता होन्ति। पुन आरम्मणंपि न करोन्ति। चित्ताधिको पन तादिसानि कम्मानि दिस्वा उग्गतचित्तो होति, चित्तं विनोदेतुं पि न सक्कोति, निच्चकालं तत्थ निबन्धचित्तो होति। सो चित्तवसिको हुत्वा चिरकालं पि तं कम्मं करोन्तो बहुं कायदुक्खं वापीतिआदिना छन्दाधिपतिनयेन वत्तब्बं।

मन्दपञ्ञा च बहुज्जना तादिसानि कम्मानि दिस्वा निवत्तपञ्ञा होन्ति, कम्मानं आदिम्पि न पस्सन्ति, अन्तपि न पस्सन्ति, अन्धकारे पविसन्ता विय होन्ति, तानि कम्मानि कातुं चित्तं पि न नमति। पञ्ञाधिको पन तादिसानि कम्मानि दिस्वा उग्गतपञ्ञो होति, कम्मानं आदिंपि पस्सति, अन्तं पि पस्सति, फलं पि पस्सति, आनिसंसं पि पस्सति। सुखेन कम्मसिद्धिया नानाउपायं पि पस्सति। सो चिरकालंपि तं कम्मं करोन्तोतिआदिना वीरियाधिपतिनयेन वत्तब्बं। इध पन महतिया कम्मवीमंसायाति च तादिसिया कम्म वीमंसायाति च वत्तब्बं।

एवं लोके महन्तेसु सुदुक्करेसु पुरिसकम्मेसु पच्चुपट्ठितेसु इमे चत्तारो धम्मा कम्मसिद्धिया संवत्तन्ति। इमेसञ्च चतुन्नं अधिपतीनं विज्जमानत्ता लोके पुरिसविसेसा नाम दिस्सन्ति, सब्बञ्ञुबुद्धा नाम दिस्सन्ति, सब्बञ्ञुबोधिसत्ता नाम दिस्सन्ति, पच्चेकबुद्धा नाम दिस्सन्ति, पच्चेकबोधिसत्तानाम दिस्सन्ति, अग्गसावकानाम महासावका नाम सावकबोधिसत्ता नाम दिस्सन्ति। लोकेपि एवरूपानं पुरिसविसेसानं वसेन सत्त लोकस्स अत्थाय हिताय सुखाय पञ्ञासिप्पविसेसा च परिभोगवत्थुविसेसा च दिस्सन्तीति।

।। अधिपतिपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

[B 472]

४. अनन्तरपच्चयो

कतमो अनन्तरपच्चयो। अनन्तरे खणे निरुद्धो चित्त चेतसिकधम्मसमूहो अनन्तरपच्चयो[१]।

कतमो धम्मो अनन्तरपच्चयस्स पच्चयुप्पन्नो। पच्छिमे अनन्तरे एव खणे उप्पन्नों चित्तचेतसिकधम्मसमूहो तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्नो[२]।

एकस्मिं भवे पटिसन्धिचित्तं पठमभवङ्गचित्तस्स अनन्तर पच्चयो, पठम भवङ्गचित्तं दुतियभवङ्गचित्तस्स अनन्तरपच्चयोतिआदिना वत्तब्बो[३]।

यदा पन धम्मयमके सुद्धावासानं दुतिये अकुसले चित्ते वत्तमानेति वुत्तनयेन तस्स सत्तस्स अत्तनो अभिनवं अत्तभावं आरब्भ एतं मम एसोहमस्मि एसो मे अत्ताति पवत्तं भवनिकन्तिक तण्हासहगतचित्तं उप्पज्जति। तदा पठमं द्विक्खत्तुं भवङ्गं चलति। ततो मनोद्वारावज्जनचित्तं उप्पज्जति। ततो सत्त भवनिकन्तिकजवनानि उप्पज्जन्ति। ततो परं भवङ्गवारो।

अपि च सो सत्तो तदा पच्चुप्पन्नभवे किञ्चि न जानाति, पुब्बभवे अत्तना अनुभूतं आरम्मणं अनुस्सरमानो अच्छति। वत्थुस्स पन अतिदुब्बलत्ता तञ्च आरम्मणं अपरिब्यत्तमेव होति। तं आरब्भ उद्धच्चसहगतचित्तमेव बहुलं पवत्तति।

यदा गब्भो थोकं वड्ढमानो होति अतिरेकद्वेमासं गतो, तदा चक्खादीनि इन्द्रियानि परिपुण्णानि होन्ति। एवं सन्तेपि मातुगब्भे आलोकादीनं पच्चयानं अभावतो चक्खुविञ्ञाणादीनि चत्तारि विञ्ञाणानि नुप्पज्जन्ति, कायविञ्ञाण-मनोविञ्ञाणानि एव उप्पज्जन्ति। सो सत्तो मातुया इरियापथपरिवत्तनादीसु बहूनि दुक्खदोमनस्सानि पच्चनुभोति। विजायनकाले पन भुसं दुक्खं निगच्छतियेव। विजायित्वापि याव वत्थुरूपानि मुदूनि होन्ति, परिपाकं न गच्छन्ति, ताव सो अतिमन्दरूपो उत्तानसेय्यको हुत्वा अच्छति। न किञ्चि पच्चुप्पन्नं आरम्मणं सल्लक्खेति। येभुय्येन पुरिम भवानुसारी एव तस्स तस्स विञ्ञाणं होति। सचे सो निरय भवतो आगतो होति, सो विरूपमुखबहुलो होति। पुरिमानि निरयारम्मणानि आरब्भ खणे खणे विरूपमुखमस्स पञ्ञायति। अथ देवलोकतो आगतो होति, दिब्बानि आरम्मणानि आरब्भ विप्पसन्नमुखबहुलो होति, खणे खणे मिहितमुखमस्स पञ्ञायति।

---

१. 'नत्थि एतेसं अन्तरं ति हि अन्तरा'। (प.अ., पृ. ७३)

२. 'तत्थ पुरिमपच्छिमानं निरोधुप्पादन्तरा भावतो निरन्तरूप्पादनसमत्थता अनन्तरपच्चयो'। (प.मू. टीका, पृ. १८०)

३. 'अनन्तरपच्चयो ति अनन्तरनिरूद्धा चित्त-चेतसिका धम्मा'। (अभिधम्मावतार, पृ. १९८)

यदा पन वत्थुरूपानि तिक्खानि होन्ति, परिपाकं गच्छन्ति। विञ्ञाणानि [B 473] चस्स सुविसदानि पवत्तन्ति। तदा अमन्दरूपो हुत्वा कीळन्तो लीळन्तो मोदन्तो पमोदन्तो अच्छति। पच्चुप्पन्ने आरम्मणानि सल्लक्खेति। मातुभासं सल्लक्खेति। इध लोकानुसारी विञ्ञाणमस्स बहुलं पवत्तति। पुरमिजातिं पमुस्सति।

किं पन सब्बोपि सत्तो इमस्मिं ठाने एव पुरिमं जातिं पमुस्सतीति चे। न सब्बोपि सत्तो इमस्मिं ठाने एव पमुस्सति। कोचि अतिरेकतरं गम्भवासदुक्खेन परिपीळितो गब्भे एव पमुस्सति। कोचि विजायनकाले, कोचि इमस्मिं ठाने पमुस्सति। कोचि इतोपरम्पि दहरकाले न पमुस्सति। वुड्ढकाले एव पमुस्सति। कोचि यावजीवंपि न पमुस्सति। द्वे तयो भवे अनुस्सरन्तोपि अत्थियेव। इमे जातिस्सरसत्ता नाम होन्ति।

तत्थ विजायनकालतो पट्ठाय छद्वारिकवीथिचित्तानि पवत्तन्ति। पच्चुप्पन्नारम्मणं सल्लक्खणतो पट्ठाय छद्वारिकवीथि चित्तानि परिपुण्णानि पवत्तन्ति। सब्बत्थपि पुरिमं पुरिमं अनन्तरे निरुद्धं चित्तं पच्छिमस्स पच्छिमस्स अनन्तरे उप्पन्नस्स चित्तस्स अनन्तर पच्चयो होति। अयञ्च अनन्तरपच्चयो नाम अनमतग्गे संसारे एकस्स सत्तस्स एकप्पबन्धो एव होति। यदा सत्तो अरहत्त मग्गं लभित्वा खन्धपरिनिब्बानं पापुणाति, तदा एव सो पबन्धो छिज्जति।

केनट्ठेन अनन्तरो, केनट्ठेन पच्चयोति। अत्तनो अनन्तरे अत्तसदिसस्स धम्मन्तरस्स उप्पादनट्ठेन अनन्तरो, उपकारकट्ठेन पच्चयो[१]। तत्थ अत्तसदिसस्साति सारम्मण भावेन अत्तना सदिसस्स। सारम्मणभावेनाति च यो धम्मो आरम्मणेन विना न पवत्तति, सो सारम्मणो नाम, एवं सारम्मणभावेन। धम्मन्तरस्स उप्पादनट्ठेनाति पुरिमस्मिं चित्ते निरुद्धेपि तस्स चिन्तनकिरियावेगो न वूपसम्मति, पच्छिमं चित्तं उप्पादेत्वा एव वूपसम्मति, एवं पच्छिमस्स धम्मन्तरस्स उप्पादनट्ठेन।

तत्थ पुरिमा पुरिमा मातुपरम्परा विय अनन्तरपच्चयपरम्परा दट्ठब्बा। पच्छिमा पच्छिमा धीतुपरम्परा विय तस्स पच्चयुप्पन्नपरम्परा दट्ठब्बा। एवं सन्ते अरहन्तानं सब्बपच्छिमं परिनिब्बानचित्तम्पि पुन पटिसन्धिचित्तसङ्खातं धम्मन्तरं उप्पादेय्याति। न उप्पादेय्य। कस्मा, तदा कम्मकिलेसवेगानं सब्बसो पटिप्पस्सद्धिभावेन अच्चन्तसन्ततरत्ता तस्स चित्तसाति।

।। अनन्तरपच्चय दीपना निट्ठिता ।।

---

१. 'अनन्तरभावेन उपकारको धम्मो अनन्तरपच्चयो'। (प.अ., पृ. ७२; मो.वि., पृ. ३२३)

[B 474]

५. समनन्तरपच्चयो

पच्चयधम्मविभागो च पच्चयुप्पन्नधम्मविभागो च अनन्तरपच्चय सदिसो[१]।

केनट्ठेन समनन्तरोति सुट्ठु अनन्तरट्ठेन समनन्तरो[२]। यथा सिलाथम्भादीसु रूपकलापा एकाबद्धा समानापि रूप धम्मभावेन सण्ठान जातिकत्ता मज्झे परिच्छेदरूपसहिता एव होन्ति। द्विन्नं रूपकलापानं मज्झे अन्तरं नाम विवरं नाम अत्थियेव। न तथा पुरिमपच्छिमानं द्विन्नं चित्तचेतसिक कलापानं मज्झे। ते पन अरूपधम्मभावेन असण्ठान जातिकत्ता मज्झे परिच्छेदधम्मस्स नाम कस्सचि आकासविवरस्स अभावतो सब्बसो अन्तर रहिता एव होन्ति। लोकस्सपि द्विन्नं कलापानं अन्तरं नाम न दिस्सति। ततो इमे सत्ता चित्तं नाम निच्चं धुवं थावरं अविपरिणामधम्मन्ति एवं चित्ते निच्चसञ्ञिनो होन्ति। एवं सुट्ठु अनन्तरट्ठेन समनन्तरो। अनन्तरट्ठेनाति च अत्तनो अनन्तरे अत्तसदिसस्स धम्मन्तरस्स उप्पादनट्ठेनाति पुब्बे वुत्तमेव।

एवं सन्ते निरोधसमापत्तिकाले पुरिमचित्तं नाम नेवसञ्ञानासञ्ञायतनचित्तं, पच्छिमचित्तं नाम अरियफलचित्तं, द्विन्नं चित्तानं अन्तरे एकरत्तिदिवम्पि द्वेरत्तिदिवानिपि पेय्याल..... सत्तरत्तिदिवानिपि अचित्तको होति। असञ्ञसत्तभूमियंपि पुरिमे कामभवे चुतिचित्तं पुरिमचित्तं नाम। पच्छिमे कामभवे पटिसन्धिचित्तं पच्छिमचित्तं नाम, द्विन्नं चित्तानं अन्तरे असञ्ञसत्तभवे पञ्चकप्पसतानि पुग्गलो अचित्तको तिट्ठति। तत्थ द्वे पुरिमचित्तानि अत्तनो अनन्तरे अत्तसदिसस्स धम्मन्तरस्स उप्पादनपच्चयसत्तिरहितानि होन्तीति। न होन्ति। महन्तेहि पन भावनापणिधिबलेहि पटिबाहितत्ता पुरिमचित्तानि च निरुज्झमानानि अनन्तरे धम्मन्तरस्स उप्पादन सत्तिसहितानि एव निरुज्झन्ति। पच्छिमचित्तानि च उप्पज्जमानानि तस्मिं खणे एकाबद्धभावेन अनुप्पज्जित्वा चिरकाले एव उप्पज्जन्ति। न च एत्तकमत्तेन पुरिमचित्तानं अनन्तरे धम्मन्तरस्स उप्पादन सत्तिनाम नत्थीति च, ते अनन्तरपच्चयधम्मा नाम न होन्तीति च सक्का वत्तुं। यथा तं रञ्ञो योधा नाम अत्थि, कदाचि राजा कालं ञत्वा तुम्हे इदानि मायुज्झथ, युद्धकालो न होति, असुकस्मिं काले एव युज्झथाति वदेय्य। ते च तदा अयुज्झमाना विचरेय्युं। एवं सन्तेपि तेसं युज्झनसत्ति नाम नत्थीति च, ते योधा नाम होन्तीति च न सक्का वत्तुन्ति।

---

१. 'यो अनन्तरपच्चयो, स्वेव समनन्तरपच्चयो। व्यञ्जनमत्तमेव हेत्थ नामं, उपचयसन्तति आदीसु विय, अधिवचननिरूत्ति दुकादिसु विय च अत्थतोपन नामं नत्थि'। (प.अ., पृ. ७२); 'अद्धानन्तरताय अनन्तरपच्चयो, कालानन्तरताय समनन्तरपच्चयो'। (प.अ., पृ. ७२)

२. 'सण्ठानभावतो सुट्ठु अनन्तरा हि समनन्तरा'। (प.अ., पृ. ७२)

एत्थ वदेय्युं, इमस्मिं पच्चये ते पन अरूपधम्मभावेन असण्ठान जातिकत्ता [B 475] मज्झेपरिच्छेदधम्मस्स नाम कस्सचि अभावतो सब्बसो अन्तररहिता एव होन्तीति वुत्तं। एवं सन्ते पुब्बे आरम्मणपच्चये भेरिसद्दवीणासद्दोपमाहि यो चित्तानं खणे खणे उप्पादो च निरोधो च वुत्तो, सो अम्हेहि कथं पच्चेतब्बोति। अञ्ञमञ्ञविरुद्धानं नानाचित्तानं खणमत्तेपि पुब्बापरपरिवत्तनस्स लोके पञ्ञायनतो। अयमत्थो पुब्बे चित्तयमकदीपनियं वित्थारतो वुत्तोयेवाति।

।। समनन्तरपच्चय दीपना निट्ठिता ।।

६. सहजातपच्चयो

पच्चयधम्मविभागो च पच्चयुप्पन्नधम्मविभागोच वुच्चति। एकतो उप्पन्ना सब्बेपि चित्तचेतसिका धम्मा अञ्ञमञ्ञं सहजात पच्चया च होन्ति सहजातपच्चयुप्पन्ना च। पटिसन्धिनामक्खन्धा च पटिसन्धिसहजातं हदयवत्थु च अञ्ञमञ्ञं सहजातपच्चया च होन्ति सहजातपच्चयुप्पन्ना च। सब्बानि महाभूतानिपि अञ्ञमञ्ञं सहजातपच्चया च होन्ति पच्चयुप्पन्नधम्मा च। पटिसन्धिचित्तस्स उप्पादक्खणे सब्बानि कम्मजरूपानि च पवत्तिकाले तस्स तस्स चित्तस्स उप्पादक्खणे तेन तेन चित्तेन जातानि सब्बानि चित्तजरूपानि च सहजातचित्तस्स पच्चयुप्पन्नानि नाम। सब्बानि उपादारूपानि सहजातमहाभूतानं पच्चयुप्पन्नानि नाम।

केनट्ठेन सहजातो, केनट्ठेन पच्चयो। सह जाननट्ठेन सहजातो, उपकारकट्ठेन पच्चयो। तत्थ सहजाननट्ठेनाति यो धम्मो जायमानो अत्तनो पच्चयुप्पन्नेहि धम्मेहि सहेव सयञ्च जायति उप्पज्जति, अत्तनो पच्चयुप्पन्ने च धम्मे अत्तना सहेव जनेति उप्पादेति, तस्स सो अत्थो सहजाननट्ठो नाम।

यथा सूरियो नाम उदयन्तो सूरियातपे च सूरिया लोके च अत्तना सहेव जनयन्तो उदेति। यथा च पदीपो नाम जलन्तो पदीपातपे च पदीपालोके च अत्तना सहेव जानयन्तो जलति। एवमेवं अयं पच्चयधम्मो उप्पज्जमानो अत्तनो पच्चयुप्पन्नधम्मे अत्तना सहेव उप्पादेति। तत्थ सूरियो विय एकमेको नाम धम्मो, सूरियातपा विय तंसम्पयुत्तधम्मा, सूरियालोका विय सहजातरूपधम्मा। तथा सूरियो विय एकमेको महाभूतरूपधम्मो, सुरियातपा विय सहजातमहाभूतधम्मा, सूरियालोका विय सहजातउपादारूपधम्मा, एस नयो पदीपुपमायपीति[१]।

।। सहजातपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

---

१. 'उपज्जमानो च सह उप्पज्जमानभावेन उपकारको धम्मो सहजातपच्चयो, पाकसस्स पदीपो विय'। (प.अ., पृ. ७३)

[B 476]

७. अञ्ञमञ्ञपच्चयो

सहजातपच्चये विभत्तेसु धम्मेसु यो यो पच्चयधम्मो ति वुत्तो, सो सो एव इध पच्चयधम्मो चेव पच्चयुप्पन्न धम्मो च होति। सब्बेपि चित्तचेतसिका धम्मा अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयधम्मा च होन्ति अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयुप्पन्नधम्मा। सहजाता चत्तारो महाभूता अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयधम्मा च होन्ति अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयुप्पन्नधम्मा च। पटिसन्धिनामक्खन्धा च पटिसन्धि सहजातं हदयवत्थुरूपञ्च अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयधम्मा च होन्ति अञ्ञमञ्ञस्स पच्चयुप्पन्नधम्मा च। अत्थो सुविञ्ञेय्योयेव।

यथा अञ्ञमञ्ञं निस्साय उस्सापिता तयो दण्डा अञ्ञमञ्ञस्स निस्सया च होन्ति, अञ्ञमञ्ञं निस्सिता च[1]। तेसु एकमेकस्मिं उस्सिते सब्बे उस्सिता होन्ति, एकमेकस्मिं पतन्ते सब्बे पतन्ति। एवं अञ्ञमञ्ञधम्मा च दट्ठब्बा।

एत्थ वदेय्युं, सब्बे चेतसिका धम्मा चित्तपच्चयं अलभमाना उप्पज्जितुं न सक्कोन्तीति युत्तं। कस्मा। फुसनादीनं चेतसिकं किच्चानं विजाननकिच्चपुब्बङ्गमत्ता, मनोपुब्बङ्गमाति हि वुत्तं। चित्तं पन चेतसिकपच्चयं अलभमानं उप्पज्जितुं न सक्कोतीति न युज्जेय्याति। वुच्चते, चेतसिकधम्मा नाम चित्तस्स सहायङ्गानि होन्ति। तस्मा तेहि विना चित्तम्पि उप्पज्जितुं न सक्कोतियेव। एसेव नयो चतूसु महाभूतेसुपीति। उपादारूपानि पन महाभूतानं निस्सन्दमत्तता सहायङ्गानि न होन्तीति। ननु आहाररूपञ्च जीवितरूपञ्च पच्चयविसेसत्ता सहायङ्गं होतीति। वुच्चते, ठितिया एव सहायङ्गं होति। न उप्पादे। इध पन उप्पादे सहायङ्गं अधिप्पेतन्ति।

।। अञ्ञमञ्ञपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

८. निस्सयपच्चयो

तिविधो निस्सयपच्चयो, सहजातनिस्सयो वत्थुपुरेजातनिस्सयो वत्थारम्मणपुरेजातनिस्सयो।

तत्थ कतमो सहजातनिस्सयो। सब्बो सहजात पच्चयो सहजातनिस्सयो। तस्मा तत्थ पच्चयविभागो च पच्चयुप्पन्नविभागो च सहजातपच्चये वुत्तनयेन वेदितब्बो।

कतमो पन वत्थुपुरेजातनिस्सयो। छ वत्थूनि चक्खुवत्थु सोतवत्थु घानवत्थु जिव्हवत्थु कायवत्थु हदयवत्थु। इमानि छवत्थूनि पवत्तिकाले सत्तानं विञ्ञाणधातूनं वत्थुपुरेजातनिस्सयो।

---

१. 'अञ्ञमञ्ञुपत्थम्भकं तिदण्डं विय'। (प.अ., पृ. ७४)

वत्थुरूपमेव पुरेजातं हुत्वा निस्सयो वत्थुपुरेजातनिस्सयो। तत्थ चित्तचेतसिकानं निस्सयट्ठानट्ठेन वत्थु नाम। पुरेजातन्ति अत्तनो अत्तनो पच्चयुप्पन्नस्स धम्मस्स उप्पत्तिक्खणतो पुरिमे खणे जातं।

तत्थ पटिसन्धिचित्तं तदा पुरेजातस्स वत्थुरूपस्स अभावतो अत्तना सहुप्पन्नमेव हदयवत्थुरूपं निस्साय उप्पज्जति। पठम भवङ्गचित्तं पन पटिसन्धिचित्तेन सहुप्पन्नहदय वत्थुरूपं निस्साय उप्पज्जति। दुतियभवङ्गचित्तं पठमभवङ्गचित्तेन सहुप्पन्नं निस्साय उप्पज्जति। एवं ततियभवङ्गचित्तं दुतिय भवङ्गचित्तेन सहुप्पन्नन्तिआदिना यावमरणासन्नकाला द्विन्नं मनोधातुमनोविञ्ञाण-धातूनं वत्थुपुरेजातनिस्सयो वेदितब्बो।

यथा वीणासद्दा नाम वीणातन्तीसु वीणादण्डकेहि पहरणवेगेन एव जायन्ति, नो अञ्ञथा। तथा पञ्चविञ्ञाणानि नाम पञ्चवत्थुसङ्घातेसु पञ्चद्वारेसु पञ्चन्नं आरम्मणानं आपाता गमनवेगेन एव जायन्ति, नो अञ्ञथा।

आपातागमनञ्च तेसं द्वारारम्मणानं ठितिपत्तकाले एव होति। आपातागमनपच्चया च द्विक्खत्तुं भवङ्गं चलति। भवङ्गचलन पच्चया च आवज्जनं उप्पज्जति। आवज्जनपच्चया च तानि पञ्चविञ्ञाणानि उप्पज्जन्ति। तस्मा चक्खादीनि पञ्चवत्थूनि पुरे अतीतभवङ्गचित्तस्स उप्पादक्खणे उप्पन्नानि एव पञ्चविञ्ञाणधातूनं वत्थुपुरेजातपच्चया होन्ति।

मरणासन्नकाले पन सब्बानि छ वत्थूनि चुतिचित्ततो पुरे सत्तरसमस्स भवङ्गचित्तस्स उप्पादक्खणे एव उप्पज्जन्ति, ततो परं न उप्पज्जन्ति। तस्मा मरणासन्नकाले भवङ्गचित्तानि च सब्बानि छद्वारिकवीथिचित्तानि च चुतिचित्तञ्च पुरेतरं उप्पन्नानि तानियेव अत्तनो अत्तनो वत्थूनि निस्साय उप्पज्जन्ति। अयं वत्थुपुरेजात निस्सया।

कतमो पन वत्थारम्मणपुरेजातनिस्सयो। यदा अत्तनो अज्झत्तं वत्थुरूपं आरब्भ यं रूपं निस्साय मम मनोविञ्ञाणं वत्तति, एतं मम एसो हमस्मि एसो मे अत्ताति एवं तण्हामान दिट्ठीहि गहणवसेन वा एतं अनिच्चं एतं दुक्खं एतं अनत्ताति एवं सम्मसनवसेन वा आवज्जनादीनि मनोद्वारिकवीथि चित्तानि पवत्तन्ति। तदा तं तं वत्थुरूपं पच्चेकं तेसं निस्सयवत्थु च होति तेसं आरम्मणञ्च। तस्मा तं तं हदयरूपं तस्स तस्स चित्तुप्पादस्स वत्थारम्मणपुरेजातपच्चयो होति। अयं वत्थारम्मण पुरेजातनिस्सयो। एवं निस्सयपच्चयो तिविधो होति।

[B 478] इध सुत्तन्तनिस्सयोपि वत्तब्बो। इमे मनुस्सा वा तिरच्छानगता वा रुक्खादयो वा महापथवियं पतिट्ठिता, महा पथवी च हेट्ठा महाउदकक्खन्धे,

महाउदकक्खन्धो च हेट्ठा महावातक्खन्धे, महावातक्खन्धो च हेट्ठा अजटाकासे, मनुस्सा गेहेसु, भिक्खू विहारेसु, देवा दिब्बविमानेसूतिआदिना सब्बं लोकप्पवत्तिं ञत्वा निस्सयपच्चयो वेदितब्बो।

।। निस्सयपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

९. उपनिस्सयपच्चयो

तिविधो उपनिस्सयपच्चयो, आरम्मणूपनिस्सयो अनन्तरूपनिस्सयो पकतूपनिस्सयो। तत्थ आरम्मणूपनिस्सयो आरम्मणाधिपतिपच्चयसदिसो, अनन्तरूपनिस्सयो अनन्तरपच्चयसदिसो।

कतमो पकतूपनिस्सयो। सब्बेपि अतीतानागत पच्चुप्पन्ना अज्झत्तबहिद्धाभूता चित्तचेतसिकरूपधम्मा च निब्बानञ्च पञ्ञत्ति च सब्बेसं पच्चुप्पन्नानं चित्तचेतसिकानं धम्मानं यथारहं पकतूपनिस्सयो[१]।

तत्थ अतीतो परिनिब्बुतो अम्हाकं बुद्धो च धम्मो च अरियसावकसङ्घो च सम्मुतिसङ्घपरम्परा च अम्हाकं पच्छिम जनानं कुसलुप्पत्तिया पकतूपनिस्सयपच्चयो। तथा लोके अतीता कालङ्कता मातापितरो च आचरिया च पण्डितसमणब्राह्मणा च पाकटा नानातित्थाचरिया च महिद्धिका महानुभावा पोराणकराजानो च पच्छिमकानं जनानं कुसलुप्पत्तिया वा अकुसलुप्पत्तिया वा सुखदुक्खुप्पत्तिया वा पकतूपनिस्सयो। तथा हि ते पच्छिमकानं जनानं अत्थाय नानासद्धम्मपञ्ञत्तियो वा नानाअसद्धम्मपञ्ञत्तियो वा नानालोकूपकरणानि वा पुरे पट्ठपेसुं। पच्छिमजना च तेहि पट्ठतितेसु दानसीलादिधम्मेसु वा लोकचारित्त कुलगोत्तचारित्त धम्मेसु वा नानादिट्ठिवादेसु वा नानाकम्मायतनसिप्पायतन विज्जाठानेसु वा यथापट्ठपितेसु गामनिगमनगरखेत्तवत्थु तळाकपोक्खरणिआवाटादीसु वा गेहरथसकटनावा सम्पोतसम्बन्धादीसु वा जातरूपरजतमणिमुत्तादीसु वा दायज्जं पटिपज्जन्ता लोके वड्ढन्ति।

अनागतोपि मेत्तेय्यो नाम बुद्धो च तस्स धम्मो च तस्स सङ्घो च एतरहि बहुज्जनानं पारमिपुञ्ञप्पवत्तिया पकतूपनिस्सयपच्चयो। तथा इमस्मिं भवे च [B 479] पच्छिमे काले पटिलभिस्समाना इस्सरियट्ठानधनधञ्ञसम्पत्तियो पुरिमे काले ठितानं महाजनानं ञानाभिसङ्खारुप्पत्तिया पकतूपनिस्सयपच्चयो। अनागतभवे च अनुभविस्समाना भवसम्पत्ति भोग सम्पत्तियो मग्गफलनिब्बानसम्पत्तियो च

१. 'पकत पनो पकतो उपनिस्सयो पकतूपनिस्सयो, पकतो नाम अत्तनो सन्ताने निप्फाने निप्फादितो वा सीलादि, उपसेवितो वा उतुभोजनादि, पकतिया येव वा उपनिस्सयो पकतुपनिस्सयो'। (प.अ., पृ. ७५)

एतरहि पच्चुप्पन्नभवे ठितानं दानसीलादिपुञ्ञकिरियुप्पत्तिया पकतूपनिस्सयपच्चयो। यथा हि लोके हेमन्ते काले धञ्ञफ्फलानि लभिस्सामाति वस्सिके काले कस्सनवप्पनकम्मानि आरभन्ति, कम्मे सिद्धे तं तं धनं लभिस्सामाति पुब्बभागे तं तं वीरियकम्मं वा तं तं पञ्ञाकम्मं वा आरभन्ति। तत्थ धञ्ञफ्फलप्पटिलाभो च तं तं धनप्पटिलाभोच तं तं कम्मारम्भस्स अनागतपकतूपनिस्सयपच्चयो तं तं कम्मारम्भो च धञ्ञफ्फलप्पटिलाभस्स च तं तं धनप्पटिलाभस्स च अतीतपकतूपनिस्सयपच्चयो। एवमेव पच्छिमे अनागते काले नानाकम्मफ्फलानि सम्पस्सन्ता पत्थयन्ता महाजना पुरिमे पच्चुप्पन्ने काले नानापुञ्ञकम्मानि आरभन्ति। तत्थ पुञ्ञफ्फलानि पुञ्ञकम्मानं अनागतपकतूपनिस्सयपच्चयो। पुञ्ञकम्मानि पुञ्ञफ्फलानं अतीतकतूपनिस्सयपच्चयो। तस्मा अनागतपकतूनिस्सयोपि अतीतपकतूपनिस्सयो विय अतिमहन्तो पच्चयो होति।

पच्चुप्पन्ना बुद्धायो पच्चया पच्चुप्पन्नानं मनुस्सदेवब्रह्मानं पच्चुप्पन्ना मातापितरो पच्चुप्पन्नानं पुत्तधीतादीनं पच्चुप्पन्नपकतूपनिस्सयो नाम। सो सुपाकटोयेव।

अज्झत्तभूता पकतूपनिस्सयधम्मा नाम बुद्धादीसु सविञ्ञाणकसन्तानेसु उप्पन्ना पच्चयधम्मा। बहिद्धाभूता पकतूपनिस्सयधम्मा नाम सत्तानं पतिट्ठानभूता पथविपब्बतनदी समुद्दादयो तेसं तेसं सत्तानं बहूपकारा अरञ्ञवनरुक्ख तिणपुब्बण्णापरण्णादयो चन्दसूरियगहनक्खत्तादयो वस्सोदकअग्गिवातसीतउण्हादयो च सब्बेपि ते सत्तानं कुसलुप्पत्तिया वा अकुसलुप्पत्तिया वा सुखुप्पत्तिया वा दुक्खुप्पत्तिया वा बलवपच्चया होन्ति।

इमे जना दिट्ठेव धम्मे परिनिब्बायिस्सामाति बोधिपक्खिय धम्मे वा भावेन्ति, अनागते बुद्धकाले परिनिब्बायिस्सामाति पारमीधम्मे वा परिपूरेन्ति। तत्थ निब्बानं तेसं धम्मानं उप्पत्तिया बलवपच्चयो होति।

लोके नानावोहारभूता नामपञ्ञत्तियो च बुद्ध सासने तिपिटकपरियत्तिधम्मभूता नामपञ्ञत्तियो च तेसं तेसं अत्थानं जाननत्थाय बलवपच्चयो।

तत्थ सङ्खतधम्मा नाम पच्चये सति उप्पज्जन्ति, असति नुप्पज्जन्ति। उप्पज्जित्वापि पच्चये सति तिट्ठन्ति, असति न तिट्ठन्ति। तस्मा तेसं उप्पत्तिया [B 480] वा ठितिया वा पच्चयो नाम इच्छितब्बो। निब्बानं पन पञ्ञत्ति च असङ्खतधम्मा होन्ति अजातिधम्मा अनुप्पादधम्मा निच्च धम्मा धुवधम्मा। तस्मा तेसं उप्पादाय वा ठितिया वा पच्चयो नाम नत्थीति।

कुसलो कुसलस्स उपनिस्सयो। सद्धं उपनिस्साय दानं देति, सीलं समादियतीतिआदिना सुपाकटो। तथा रागं उपनिस्साय पाणं हनति, अदिन्नं आदियतीतिआदिना सप्पायं उतुं सप्पायं भोजनं उपनिस्साय कायिकं सुखं पच्चनुभोतीतिआदिना च अकुसलो अकुसलस्स, अब्याकतो अब्याकतस्स उपनिस्सयोपि सुपाकटो।

कुसलो पन असुकलस्सपि बलवूपनिस्सयो। दानं दत्वा तेन दानेन अत्तानं उक्कसेति, परं वम्भेति। तथा सील सम्पन्नो हुत्वा समाधिसम्पन्नो हुत्वा पञ्ञासम्पन्नो हुत्वा अत्तानं उक्कंसेति, परं वम्भेति।

कुसलो अब्याकतस्सपि बलवूपनिस्सयो। सब्बानि चतुभूमिककुसलकम्मानि वा कम्मपरिवारानि कुसलानि वा कालन्तरे चतुभूमिकानं विपाकाव्याकतानं बलवूपनिस्सयो। दानपारमिं पूरेन्ता पूरणकाले बहुं कायिकदुक्खं पच्चनुभवन्ति। तथा सीलपारमिं निक्खमपारमिं पञ्ञापारमिं वीरियपारमिं खन्तिपारमिं सच्चपारमिं अधिट्ठानपारमिं मेत्तापारमिं उपेक्खा पारमिं। एसेव नयो झानभावना मग्गभावनासुपि।

अकुसलो कुसलस्सापि बलवूपनिस्सयो। इधेकच्चो पापं कत्वा पच्छा विप्पटिसारी हुत्वा तस्स पापस्स पहानाय दानसीलझानमग्गकुसलानि सम्पादेति। तं पापं तेसं कुसलानं बलवूपनिस्सयो।

अकुसलो अब्याकतस्सपि बलवूपनिस्सयो। इध बहू जना दुच्चरितानि कत्वा चतूसु अपायेसु पतित्वा अपायदुक्खं पच्चनुभवन्ति। दिट्ठधम्मेपि केचि अत्तनो वा परस्स वा दुच्चरितकम्म पच्चया बहुं दुक्खं पच्चनुभवन्ति। केचि दुच्चरितकम्मेन धनं लभित्वा सुखं पच्चनुभवन्ति। बहुज्जना रागमूलकं बहुं दुक्खं पच्चनुभवन्ति, दोसमूलकं दिट्ठिमूलकं मानमूलकन्ति।

अब्याकतो कुसलस्सपि बलवूपनिस्सयो। धन सम्पत्तिया दानं देति, सीलं पूरेति, पञ्ञं पूरेति, भावनासप्पायं आवासं वा लेणं वा गुहं वा रुक्खं वा अरञ्ञं वा पब्बतं वा गोचरगामं वा उतुसप्पायं वा आहारसप्पायं वा लभित्वा तं तं भावनं भावेति।

अब्याकतो अकुसलस्सपि बलवूपनिस्सयो। लोके चक्खुसम्पदं निस्साय बहूनि दस्सनमूलानि अकुसलानि उप्पज्जन्ति। एस नयो सोतसम्पदादीसु तथा हत्थसम्पदं पादसम्पदं सत्थसम्पदं आवुधसम्पदन्ति आदिनापि वत्तब्बो। एवं उपनिस्सयो तिविधो होति।

[B 481] इध सुत्तन्तूपनिस्सयोपि वत्तब्बो। कल्याणमित्तं उपनिस्साय पापमित्तं उपनिस्साय गामं उपनिस्साय अरञ्ञं उपनिस्सायाति आदिना बहूसु ठानेसु आगतो। अपि च पञ्चनियामधम्मा सत्तलोक सङ्खारलोक ओकासलोक सङ्खातानं तिण्णं लोकानं अविच्छिन्नप्पवत्तिया बलवपच्चया होन्ति। अयञ्च अत्थो नियामदीपनियं अम्हेहि वित्थारतो दीपितोति।

केनट्ठेन आरम्मणूपनिस्सयोति। अधिपतिभूतं आरम्मणमेव आरम्मणिकधम्मानं बलवनिस्सयट्ठेन आरम्मणूपनिस्सयो।

केनट्ठेन अनन्तरूपनिस्सयोति। पुरिमं अनन्तरचित्तमेव पच्छिमस्स अनन्तरचित्तस्स उप्पज्जनत्थाय बलवनिस्सयट्ठेन अनन्तरूपनिस्सयो। माता विय पुरिमचित्तं, पुत्तो विय पच्छिमचित्तं। यथा माता अत्तनो अनन्तरे पुत्तस्स उप्पज्जनत्थाय बलवूपनिस्सयो होति, तथा पुरिमचित्तं पच्छिमचित्तस्स उप्पज्जनत्थायाति।

केनट्ठेन पकतूपनिस्सयोति। पकतिया व लोके पण्डितानं पाकटो उपनिस्सयो पकतूपनिस्सयो।

एत्थ च अनन्तरूपनिस्सयानुभावो अनन्तरचित्ते एव फरति। पकतूपनिस्सयानुभावो पन दूरेपि फरतियेव। तथा पि इमस्मिं भवे पुरिमेसु दिवसेसु वा मासेसु वा संवच्छरेसु वा दिट्ठसुतघायितसायितफुसितविञ्ञातानि आरम्मणानि पच्छातथारूपे पच्चये सति वस्ससतेपि मनोद्वारे आपातं आगच्छन्ति। इदं नाम पुब्बे मया दिट्ठं सुतन्तिआदिना सत्ता अनुस्सरन्ति। ओपपातिकसत्ता पन पुरिमभव पि अनुस्सरन्ति। तथा मनुस्सेसुपि अप्पेकच्चे जातिस्सरसञ्ञालाभिनो। तथा पुब्बे अनेकसतसहस्सेसु दिट्ठादीसु वत्थूसु पच्छा एकस्मिं खणे एकं वत्थुं दिस्वा वा सुत्वा वा तस्मिं एव खणे बहूसुपि तेसु मनोविञ्ञाणसन्तानं फरमानं पवत्ततीति।

।। उपनिस्सयपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१०. पुरेजातपच्चयो

तिविधो पुरेजातपच्चयो। वत्थुपुरेजातपच्चयो च आरम्मणपुरेजातपच्चयो च वत्थारम्मणपुरेजातपच्चयो[१]।

[B 482] तत्थ वत्थुपुरेजातो च वत्थारम्मणपुरेजातो च पुब्बे निस्सयपच्चये निस्सयनामेन वुत्ता एव।

---

१. 'पुरेजात पच्चयो वत्थारम्मणवसेन दुविधो। तत्थ वत्थु पुरेजातो नाम वत्थु रूपानि। आरम्मणपुरेजातो नाम पच्चुप्पन्नरूपादिनेव'। (अभिधम्मावतार, पृ. १९९)

आरम्मणपुरेजातो नाम पच्चुप्पन्नानि अट्ठारसनिप्फन्नरूपानि एव। तेसुपि पच्चुप्पन्नानि रूपसद्दादीनि पञ्चारम्मणानि पञ्चन्नं पञ्चविञ्ञाण वीथिचित्तानं नियमतो आरम्मणपुरेजातपच्चया होन्ति। यथा हि वीणासद्दा नाम वीणातन्तीसु वीणादण्डकेन पहरण पच्चया एव उप्पज्जन्ति। एवञ्च सति ते सद्दा पुरेजाताहि वीणातन्ति वीणादण्डकेहि विना उप्पज्जितुं न सक्कोन्ति। एवमेवं पञ्च विञ्ञाण वीथिचित्तानिपि पञ्चसु वत्थुद्वारेसु पञ्चन्नं आरम्मणानं आपातागमन पच्चया एव उप्पज्जन्ति। आपातागमनञ्च तेसं द्विन्नं ठितिपत्तकाले एव होति। न केवलञ्च तस्मिं काले तानि पञ्चारम्मणानि तेसु पञ्चवत्थूसु एव आपातमागच्छन्ति। अथ खो भवङ्गमनोद्वारेपि आपातं आगच्छन्तियेव। तस्मिं आपातगमनत्ता एव तं भवङ्गम्पि द्विक्खत्तुं चलित्वा उपच्छिज्जति, भवङ्गुपच्छेदे एव तानि वीथिचित्तानि उप्पज्जन्ति। एवञ्च सति तानि वीथिचित्तानि पुरेजातेहि वत्थु द्वारारम्मणेहि विना उप्पज्जितुं न सक्कोन्तीति। तानि पन सब्बानिपि अट्ठारसनिप्फन्नरूपानि निरुद्धानि हुत्वा अतीतानिपि होन्ति, अनुप्पन्नानि हुत्वा अनागतानिपि होन्ति। उप्पन्नानि हुत्वा पच्चुप्पन्नानिपि होन्ति। सब्बानिपि मनोविञ्ञाणवीथिचित्तानं आरम्मणानि होन्ति। तेसु पच्चुप्पन्नानि एव तेसं आरम्मणपुरेजातपच्चया होन्ति। यदा दूरे वा पटिच्छन्ने वा ठितं तं तं आरम्मणवत्थुं मनसा एव आरम्मणं करोति, तदा तं तं वत्थु सचे तत्थ तत्थ विज्जमानं होति, पच्चुप्पन्नं नाम होति।

।। पुरेजातपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

११. पच्छाजातपच्चयो

पच्छिमं पच्छिमं पच्चुप्पन्नं चित्तं पुरेजातस्स पच्चुप्पन्नस्स चतु समुट्ठानिकस्स रूपकायस्स वुड्ढिविरुळ्हिया पच्छाजातपच्चयो। यथा तं पच्छिमवस्सेसु अनुवस्सं वस्समानानि वस्सोदकानि पुरिमवस्सेसु जातानं रुक्खपोतकानं वुड्ढिविरुळ्हिया पच्छाजात पच्चया होन्तीति।

तत्थ पच्छिमं पच्छिमं चित्तन्ति पठमभवङ्गतो पट्ठाय याव चुति चित्ता सब्बं चित्तं वुच्चति। पुरेजातस्साति पटिसन्धिचित्तेन सहुप्पन्नं कम्मजरूपकायं आदिं कत्वा अज्झत्तसन्तानपरियापन्नो सब्बो चतुसमुट्ठानिकरूपकायो वुच्चति।

[B 483] पटिसन्धिचित्तेन सहुप्पन्नस्स कम्मजरूपकायस्स पठम भवङ्गादीनि पन्नरसभवङ्गचित्तानि पच्छाजातपच्चया होन्ति। पटिसन्धि चित्तं पन तेन कायेन सहुप्पन्नत्ता पच्छजातं न होति। सोळसमभवङ्गचित्तञ्च तस्स कायस्स भिज्जनक्खेत्ते उप्पन्नत्ता पच्चयो न होति। तस्मा पन्नरसभवङ्गचित्तानीति वुत्तं।

पटिसन्धिचित्तस्स ठितिक्खणे पन द्वे रूपकाया उप्पज्जन्ति कम्मजरूपकायो च उतुजरूपकायोच। तथा भङ्गक्खणेपि। पठमभवङ्गस्स उप्पादक्खणे पन तयो रूपकाया उप्पज्जन्ति कम्मजरूपकायो च उतुजरूपकायो च चित्तजरूपकायो च। तदा बहिद्धाहारफ्फरणं लभित्वा अज्झत्ताहारो आहारजरूपकायं जनेति, ततो पट्ठाय चतुसमुट्ठानिका चत्तारो रूपकाया दीप जाला विय पवत्तन्ति। ते उप्पादक्खणं अतिक्कम्म याव ठितिभावेन धरन्ति, ताव पन्नरसचित्तानि तेसं कायानं पच्छाजातपच्चया होन्तियेव।

वुड्ढिविरुळ्हियाति चतुसमुट्ठानिकरूपसन्ततिया उपरूपरि वुड्ढिया च विरुळ्हिया च। तथाहि पुरिमा पुरिमा चत्तारो रूपकाया सचे पच्छाजात पच्चयं पुनप्पुनं लभन्ति, एवं सति ते निरुज्झन्तापि पच्छारूपसन्ततिपरम्परानं वुड्ढिया च विरुळ्हिया च वेपुल्लाय च बलव पच्चया हुत्वा निरुज्झन्तीति।

।। पच्छाजातपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१२. आसेवनपच्चयो

द्वादस अकुसलचित्तानि सत्तरस लोकियकुसल चित्तानि आवज्जन-द्वयवज्जितानि अट्ठारसकिरियचित्तानीति सत्त चत्तालीसं लोकियजवनचित्तानि आसेवनपच्चयो[1]। तेसु निरन्तरप्पवत्तं जवनसन्ततिं पत्वा पुरिमं पुरिमं जवनचित्तं आसेवन पच्चयो। चतूहि मग्गचित्तेहि पच्छिमं पच्छिमं चित्तं आसेवनपच्चयुप्पन्नं।

केनट्ठेन आसेवनन्ति। उपरूपरिपगुणभाववड्ढनत्थं थाम बलवड्ढनत्थञ्च परिवासग्गाहापनट्ठेन[2]।

तत्थ पगुणभावोति पुनप्पुनं सज्झायितस्स पाळिपाठस्स सुखेन पवत्तनं विय जवनट्ठानजवनकिच्चसङ्खाते ठानकिच्चविसेसे पच्छिम पच्छिमचित्तस्स सुखेन पवत्तनं। परिवासो नाम कोसेय्यवत्थं पुनप्पुनं सुगन्धेन परिवासनं विय चित्तसन्ताने पुनप्पुन्नं रज्जनदुस्सनादिना वा अरज्जन अदुस्सनादिना वा परिवासनं। पुरिमस्मिं जवनचित्ते निरुद्धेपि तस्स जवनवेगो न निरुज्झति, पच्छिमं चित्तसन्तानं फरमानो पवत्ततियेव। तस्मा पच्छिमं पच्छिमं जवनचित्तं उप्पज्जमानं तेन वेगेन पग्गहितं [B 484] बलवतरं हुत्वा उप्पज्जति। एवं पुरिमचित्तं अत्तनो परिवासं पच्छिमचित्तं गण्हापेति। पच्छिमञ्च चित्तं पुरिमस्स चित्तस्स परिवासं गहेत्वा पवत्तति। एवं सन्तेपि

१. 'आसेवनपच्चयो ति ठपेत्वा आवज्जनद्वयं लोकिय-कुसलाकुसलक्रियाव्याकता धम्मा च'। (अभिधम्मावतार, पृ. १९९)

२. 'आसेवनट्ठेन अनन्तरानं पगुणबलवभावाय उपकारको धम्मो आसेवनपच्चयो, गन्थादीसु पुरिपुमरिमाभियोगो विय'। (प.अ., पृ. ७६)

सो आसेवनवेगो पकतिया सत्तहि चित्तवारेहि परिक्खयं गच्छति, ततो परं तदारम्मणविपाकचित्तं वा उप्पज्जति, भवङ्ग चित्तवारो वा पवत्तति।

इध सुत्तन्तासेवनपच्चयोपि वत्तब्बो। सतिपट्ठानं भावेति, सम्मप्पधानं भावेति, सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति, धम्म विचयसम्बोज्झङ्गं भावेति, सम्मादिट्ठिं भावेति, सम्मासङ्कप्पं भावेतीतिआदिना बहूसु ठानेसु वुत्तो। तत्थ भावेतीति एकंपि दिवसं भावेति, सत्तपि दिवसानि भावेति, एकंपि मासं भावेति, सत्तपि मासानि भावेति, एकंपि संवच्छरं भावेति, सत्तपि संवच्छरानि भावेतीति अत्थो।

पुरिमपुरिमेसु भवेसु आसेवितानि भावितानि बहुली कतानि कुसलानि वा अकुसलानि वा पच्छिमपच्छिमेसु भवेसु बलवतरानं कुसलानं वा अकुसलानं वा उप्पत्तिया आसेवनपच्चयो।

कालन्तरे वा भवन्तरे वा तादिसानं कुसलाकुसलानं उप्पत्तिया पच्चयो उपनिस्सयपच्चयो नाम। तेसं येव बलवतरत्थाय पच्चयो आसेवनपच्चयो नाम।

लोकेपि महन्तेसु चित्तभावनाकम्मेसु वाचा भावनाकम्मेसु कायभावनाकम्मेसु अङ्गपच्चङ्गभावनाकम्मेसु कम्मायतनसिप्पायतनविज्जाठानेसु च आसेवना भावना बहुलीकम्मानं निस्सन्दगुणा नाम सन्दिस्सन्तियेव।

सब्बेसं खणिकधम्मानं मज्झे एवरूपस्य आसेवन पच्चयस्स विज्जमानत्ता पुरिसबलपुरिसथामानं उपरूपरि वड्ढन वसेन चिरकालं पवत्तितानि पुरिसकम्मानि निप्फत्तिं पापुणन्ति, सब्बञ्ञुबुद्धभावंपि गच्छन्ति।

।। आसेवनपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१३. कम्मपच्चयो

दुविधो कम्मपच्चयो सहजातकम्मपच्चयो नानाक्खणिककम्मपच्चयो[१]।

तत्थ खणत्तयसमङ्गि भूता सब्बापि कुसलाकुसलाब्याकतचेतना सहजातकम्मपच्चयो। चेतनासम्पयुत्ता सब्बेपि चित्तचेतसिका धम्मा च पटिसन्धिचित्तेन सहुप्पन्ना कम्मजरूपधम्मा च पवत्तिकाले सब्बेपि चित्तजरूपधम्मा च तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना।

[B 485] अतीता कुसलाकुसलचेतना नानाक्खणिककम्मपच्चयो। बात्तिंसविधा लोकियविपाक चित्तचेतसिका धम्मा च सब्बे कम्मजरूपधम्मा च तस्स पच्चयस्स पच्चयुप्पन्ना।

---

१. 'सो नानाक्खणिकाय चेव कुसलाकुसल चेतनाय सहजाताय च सब्बाय पि चेतनाय वसेन दुविधो होति'। (प.अ., पृ. ७६)

केनट्ठेन कम्मन्ति। किरियाविसेसट्ठेन कम्मं[१]। चेतना हि किरिया विसेसो होति सब्बकम्मेसु जेट्ठकत्ता[२]। ता हि सब्बेसु कायवचीमनोकम्मेसु पच्चुपट्ठितेसु तस्स तस्स कम्मस्स निप्फत्तत्थाय सम्पयुत्तधम्मे चेतेति कप्पेति संविदहति, एकतो उट्ठापेति, तस्मा सब्बकम्मेसु जेट्ठका होति। इति किरियाविसेसट्ठेन कम्मं नाम। करोन्ति एतेनानि वा कम्मं। किं करोन्ति। कायिककिरियंपि करोन्ति, वाचसिककिरियंपि करोन्ति, मानसिककिरियंपि करोन्ति। तत्थ कायिककिरिया नाम गमनठान निसज्जादयो अभिक्कमनपटिक्कमनादयो अन्तमसो अक्खिदलानं उक्खिपननिक्खिपनानिपि। वाचसिककिरिया नाम वाचापवत्तनकिरिया। मानसिककिरिया नाम सुचिन्तित दुचिन्तितकिरिया, अन्तमसो पञ्च विञ्ञाणानं दस्सनकिच्चसवनकिच्चादीनिपि। सब्बापि इमा किरियायो एताय चेतनाय सत्ता करोन्ति, संविदहन्ति, तस्मा सा चेतना कम्मं नाम।

अत्तनो पच्चयुप्पन्नेन सह जायतीति सहजातं। सहजातञ्च तं कम्मञ्चाति सहजातकम्मं। सहजातकम्मं हुत्वा पच्चयो सहजातकम्मपच्चयो। सहजातकम्मभावेन पच्चयोति वुत्तं होति।

अञ्ञो कम्मस्स उप्पत्तिक्खणो अञ्ञो विपाकस्स उप्पत्तिक्खणोति एवं विसुं विसुं उप्पत्तिक्खणो एतस्साति नानाक्खणिकं। नानाक्खणिकञ्च तं कम्मञ्चाति नानाक्खणिककम्मं। नानाक्खणिककम्मं हुत्वा पच्चयो नानाक्खणिककम्मपच्चयो। नानाक्खणिककम्मपच्चयभावेन पच्चयोति वुत्तं होति। अरियमग्गसम्पयुत्ता चेतना अत्तनो निरुद्धानन्तरे एव अरियफलविपाकं जनेति, सापि नानाक्खणिका एव होति।

एत्थ च एका दानकुसलचेतना अत्तना सहजातानं चित्तचेतसिकानञ्च कायिकवाचसिककिरियाभूतानं चित्तजरूपानञ्च सहजातकम्मपच्चयो। ताय चेतनाय आयतिं कालन्तरे उप्पज्जमानस्स विपाकक्खन्धस्स च कम्मजरूपक्खन्धस्स च नानाक्खणिक कम्मपच्चयो। एवं एका कम्मपथपत्ता सुचरितदुच्चरितचेतना द्वीसु कालेसुद्विन्नं पच्चयुप्पन्नानं द्वीहि पच्चयसत्तीहि पच्चयो होतीति।

एत्थ च नानाक्खणिककम्मपच्चये कम्मन्ति किरियाविसेसो। सो पन [B 486] चेतनाय निरुद्धायपि अनिरुज्झित्वा तं चित्तसन्तानं अनुगच्छतियेव। यदा विपच्चितुं ओकासं लभति, तदा सो किरिया विसेसो चुतिनन्तरे एको अत्तभावो हुत्वा विपच्चति पातुभवति। ओकासं पन अलभमाना भवसतंपि भवसहस्संपि भवसतसहस्संपि तं सन्तानं अनुगच्छतियेव। महग्गतकम्मं पन लद्धोकासे सति

---

१. 'कम्मं ति चेतनाकम्मं चेव'। (प.अ., पृ. १०३)

२. 'चेतनाहं, भिक्खवे, कम्मं वदामि'। (अ.नि., भाग-३, पृ. ४१५)

दुतियभवे ब्रह्मलोके एको ब्रह्मत्तभावो हुत्वा विपच्चति पातुभवति। सुपरिपक्ककम्मत्ता पन दुतियभवेयेव खीयति, ततो परं नानुगच्छतीति।

।। कम्मपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१४. विपाकपच्चयो

छत्तिंसविधा विपाकभूता सहजातचित्तचेतसिका धम्मा विपाक पच्चयो[१]। तेयेव अञ्ञमञ्ञञ्च पटिसन्धिक्खणे कम्मजरूपानि च पवत्तिक्खणे विपाकं चित्तजातानि चित्तजरूपानि च विपाकपच्चयुप्पन्ना।

केनट्ठेन विपाकोति। विपच्चनट्ठेन विपाको। विपच्चनं नाम मुदुतरुणभावं अतिक्कम्म विपक्कभावं आपज्जनं। कस्स पन धम्मस्स मुदुतरुणभावो, कस्स विपक्कभावोति। नानाक्खणिककम्मपच्चय सङ्खातस्स अतीतकम्मस्स मुदुतरुणभावो, तस्सेव कम्मस्स विपक्कभावो।

तत्थ एकस्स कम्मस्स चतस्सो अवत्थायो होन्ति चेतना वत्था कम्मावत्था निमित्तावत्था विपाकावत्थाति।

तत्थ ताय चेतनाय निरुद्धायपि तस्सा किरिया विसेसो न निरुज्झति, तं चित्तसन्तानं अनुगच्छतियेव। अयं कम्मावत्था नाम।

निमित्तावत्थाति तं कम्मं यदा विपच्चितुं ओकासं लभति, तदा मरणासन्नकाले तस्स पुग्गलस्स तमेव कम्मं वा पच्चुपट्ठाति, सो पुग्गलो तदा दानं देन्तो विय सीलं रक्खन्तो विय पाणघातं वा करोन्तो विय होति। कम्मनिमित्तं वा पच्चुपट्ठाति, दान वत्थुआदिकं वा सत्थादिकं वा अञ्ञं वापि पुब्बे तस्स कम्मस्स उपकरणभूतं आरम्मणं तदा तस्स पुग्गलस्स हत्थगतं विय होति। गतिनिमित्तं वा पच्चुपट्ठाति, दिब्बविमानादिकं वा निरयग्गिजालादिकं वा उप्पज्जमानभवे उपलभितब्बं वा अनुभवितब्बं वा आरम्मणं तदा दिस्समानं होति। अयं निमित्ता वत्था नाम।

विपाकावत्थाति सचे सो पुग्गलो तथा पच्चुपट्ठितं तं कम्मं वा कम्मनिमित्तं वा गतिनिमित्तं वा एकं आरम्मणं अनुञ्ञमानो मरति, तदा तं कम्मं तस्मिंभवे [B 487] विपच्चति, तं कम्मं तस्मिंभवे एको अत्तभावो हुत्वा पातुभवति तत्थ पुरिमासु तीसु अवत्थासु तं कम्मं मुदुतरुणभूतं होति, पच्छिमं पन विपाकावत्थं पत्वा विपक्कभूतं होति। तेन वुत्तं विपच्चनं नाम मुदुतरुणभावं अतिक्कम्म विपक्कभावं आपज्जनन्ति। एवं विपक्कभावं आपन्नो चित्त चेतसिकधम्मसमूहो विपाको नाम।

१. 'विपाकपच्चयो ति विपाक चित्त चेतसिका'। (अभिधम्मावतार, पृ. १९९)

तत्थ यथा अम्बप्फलानि नाम यदा विपक्कभावं आपज्जन्ति, तदा सब्बसो सिनिद्धरूपानि होन्ति। एवमेवं विपाकधम्मा नाम निरुस्साहा निब्यापारा हुत्वा सब्बसो सन्तरूपा होन्ति। तेसं सन्तरूपत्तायेव भवङ्गचित्तानं आरम्मणं अविभूतं होति, भवङ्गतो वुट्ठानकाले तं आरम्मणं न जानाति। तथाहि रत्तियं निद्दायन्तस्स पुरिमभवे मरणासन्नकाले यथागहितं कम्मादिकं आरम्मणं आरब्भ भवङ्गसोतं पवत्तमानंपि तस्स भवङ्गसोतस्स तं आरम्मणं आरब्भ इदं नाम मे पुरिमभवे आरम्मणं दिट्ठन्ति कस्सचि जाननवीथिचित्तस्स उप्पत्तिया पच्चयो न होति। सो पुग्गलो निद्दायनकालेपि उट्ठानकालेपि पुरिमभवसिद्धं तं निमित्तं न जानाति। एवं निरुस्साहनिब्यापारसन्तरूपं भावेन उपकारकता विपाकपच्चयता नामाति[१]।

।। विपाकपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१५. आहारपच्चयो

दुविधो आहारपच्चयो रूपाहारपच्चयो अरूपाहार पच्चयो[२]।

तत्थ रूपाहारपच्चयो नाम कबळीकाराहारसङ्खातं ओज रूपं वुच्चति। सो च अज्झत्ताहारो बहिद्धाहारोति दुविधो। कबळीकाराहारभक्खानं सत्तानं सब्बेपि चतुसमुट्ठानिकरूपधम्मा तस्स दुविधस्स रूपाहारस्स पच्चयुप्पन्ना।

अरूपाहारो पन तिविधो फस्साहारो मनोसञ्चेतनाहारो विञ्ञाणाहारो च। तयो पेते धम्मा सहजातानं नामरूपधम्मानं आहारपच्चयो होन्ति। सहजाता च नामरूप धम्मा तेसं पच्चयुप्पन्ना।

केनट्ठेन आहारोति। भुसं हरणट्ठेन आहारो। भुसं हरणट्ठेनातिच दळहं पवत्तापनट्ठेन, चिरकालं ठितिया वुड्डिया विरुळिहया वेपुल्लाय उपत्थम्भनट्ठेनाति वुत्तं होति। जननकिच्चयुत्तोपि आहारो उपत्थम्भनकिच्चप्पधानो होतीति[३]।

तत्थ दुविधो रूपाहारो अज्झत्तसन्ताने चतुसमुट्ठानिकं रूपकायं उपब्रूहयन्तो भुसं हरति, दळहं पवत्तेति, चिरं अद्धानं गमेति, तं तं आयुकप्पपरियोसानं पापेतीति आहारो।

---

१. 'निरूस्साहसन्तभावेन निरूस्साहसन्तभावाय उपकारको विपाकधम्मो विपाकपच्चयो'। (प.अ., पृ. ७७)

२. 'अरूपिनो आहार सम्पयुत्तकानं धम्मानं तं समुट्ठानं च रूपानं आहारपच्चयेन पच्चयो'। (प.अ., पृ. ७७)

३. 'सति हि पि जनकभावे उपत्थम्भकत्तं एव आहारस्स पट्ठानकिच्चं'। जनयन्तो पि आहारो अविच्छेदवसेन उपत्थम्भेन्तो व जनेतीति उपत्थम्भकभावो व आहारभावो। (अ.वि.टीका, पृ. २२०)

[B 488] फस्साहारो आरम्मणेसु इट्ठानिट्ठरसं नीहरन्तो सम्पयुत्तधम्मे भुसं हरति। मनोसञ्चेतनाहारो कायवचीमनोकम्मेसु उस्साहं जनेन्तो सम्पयुत्तधम्मे भुसं हरति। विञ्ञाणाहारो आरम्मणविजाननट्ठेन पुब्बङ्गमकिच्चं वहन्तो सम्पयुत्तधम्मे भुसं हरति, दळ्हं पवत्तेति, चिरं अद्धानं गमेतीति आहारो। सम्पयुत्तधम्मे भुसं हरन्तो सहजातरूपधम्मेपि भुसं हरतियेव।

इध सुत्तन्तनयोपि वत्तब्बो। यथा सकुणा नाम चक्खूहि दिसाविदिसं विभावेत्वा पत्तेहि रुक्खतो रुक्खं वनतो वनं आकासेन पक्खन्दित्वा तुण्डकेहि फलाफलानि तुदित्वा यावजीवं अत्तानं यापेन्ति। तथा इमे सत्ता छहि विञ्ञाणेहि आरम्मणानि विभावेत्वा छहि मनोसञ्चेतनाहारेहि आरम्मणवत्थुप्पटिलाभत्थाय उस्सुक्कनं कत्वा छहि फस्साहारेहि आरम्मणेसु रसं पातुभवन्तं कत्वा सुखदुक्खं अनुभवन्ति। विञ्ञाणेहि वा आरम्मणानि विभावेत्वा नामरूप सम्पत्तिं साधेन्ति। फस्सेहि आरम्मणेसु रसं पातुभवन्तं कत्वा आरम्मणरसानुभवनं वेदनं सम्पादेत्वा तण्हावेपुल्लं आपज्जन्ति। चेतनाहि तण्हामूलकानि नानाकम्मानि पसवेत्वा भवतो भवं संसरन्ति। एवं आहारधम्मानं महन्तं आहारकिच्चं वेदितब्बन्ति।

।। आहारपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१६. इन्द्रियपच्चयो

तिविधो इन्द्रियपच्चयो सहजातिन्द्रियपच्चयो पुरेजातिन्द्रियपच्चयो रूपजीवितिन्द्रियपच्चयो।

तत्थ पन्नरसिन्द्रियधम्मा सहजातिन्द्रियपच्चयो नाम, जीवितिन्द्रियं मनिन्द्रियं सुखिन्द्रियं दुक्खिन्द्रियं सोमनस्सिन्द्रियं दोमनस्सिन्द्रियं उपेक्खिन्द्रियं सद्धिन्द्रियं वीरियिन्द्रियं सतिन्द्रियं समाधिन्द्रियं पञ्ञिन्द्रियं अनञ्ञातञ्ञस्सामीतिन्द्रियं अञ्ञिन्द्रियं अञ्ञाताविन्द्रियन्ति। तेहि सहजाता चित्तचेतसिकधम्मा च रूपधम्मा च तस्स पच्चयुप्पन्ना।

पञ्चिन्द्रियरूपानि पुरेजातिन्द्रियपच्चयो, चक्खुन्द्रियं सोतिन्द्रियं घानिन्द्रियं जिव्हिन्द्रियं कायिन्द्रियं। पञ्चविञ्ञाणचित्तचेतसिक धम्मा तस्स पच्चयुप्पन्ना।

एकं रूपजीवितिन्द्रियं रूपजीवितिन्द्रियपच्चयो। सब्बानि कम्मजरूपानि जीवितरूपवज्जितानि तस्स पच्चयुप्पन्नानि।

[B 489] केनट्ठेन इन्द्रियन्ति। इस्सरियट्ठेन इन्द्रियं[१]। तत्थ कत्थ इस्सरियन्ति। अत्तनो अत्तनो पच्चयुप्पन्नेसु धम्मेसु इस्सरियं। कस्मिं कस्मिं किच्चे

---

१. 'इन्दति परमिस्सरियं करोन्तीति इन्द्रियानि'। (अट्ठ., पृ. ९९)
'अधिपतिट्ठेन उपकारका इन्द्रियपच्चयो'। (प.अ., पृ. ७७)

इस्सरियन्ति अत्तनो अत्तनो किच्चे इस्सरियं। नामजीवितं सम्पयुत्तधम्मानं जीवनकिच्चे इस्सरियं। जीवनकिच्चेति आयुवड्ढनकिच्चे, सन्ततिठितिया चिरकालठितिकिच्चेति अत्थो। मानन्द्रियं आरम्मणग्गहणकिच्चे सम्पयुत्तधम्मानं इस्सरियं। अवसेसो इन्द्रियट्ठो पुब्बे इन्द्रिययमकदीपनियं वुत्तोयेव।

एत्थ वदेय्य, द्वे इत्थिन्द्रियपुरिसिन्द्रियधम्मा इन्द्रियभूता समानापि कस्मा इन्द्रियपच्चये विसुं न गहितातिं। पच्चयकिच्चस्स अभावतो। तिविधञ्हि पच्चयकिच्चं जननकिच्चञ्च उपत्थम्भनकिच्चञ्च अनुपालनकिच्चञ्च। तत्थ यो पच्चयो पच्चयुप्पन्नधम्मस्स उप्पादाय पच्चयो होति, यस्मिं असति पच्चयुप्पन्नो धम्मो न उप्पज्जति, तस्स पच्चयकिच्चं जननकिच्चं नाम। यथा अनन्तरपच्चयो। यो पच्चयो पच्चयुप्पन्नधम्मस्स ठितिया च वुड्ढिया च विरुळ्हिया च पच्चयो होति, यस्मिं असति पच्चयुप्पन्नो धम्मो न तिट्ठति न वड्ढति न विरूहति, तस्स पच्चयकिच्चं उपत्थम्भनकिच्चं नाम। यथा पच्छाजातपच्चयो। यो पच्चयो पच्चयुप्पन्नस्स धम्मस्स पवत्तिया पच्चयो होति, येन विना पच्चयुप्पन्नो धम्मो चिरकालं न पवत्तति, सन्तति गमनं छिज्जति, तस्स पच्चय किच्चं अनुपालनकिच्चं नाम। यथा रूप जीवितिन्द्रियपच्चयो। एते पन द्वे इन्द्रियधम्मा तेसु तीसु पच्चय किच्चेसु एककिच्चंपि नसाधेन्ति, तस्मा एते द्वे धम्मा इन्द्रियपच्चये विसुं न गहितातिं।

एतं सन्ते एते द्वे धम्मा इन्द्रियातिपि न वत्तब्बातिं। नो न वत्तब्बा। कस्मा। इन्द्रियकिच्चसब्भावतोतिं। किं पन एतेसं इन्द्रियकिच्चन्तिं। लिङ्गनिमित्तकुत्त-आकप्पेसु इस्सरता इन्द्रियकिच्चं। तथा हि यस्स पुग्गलस्स पटिसन्धिक्खणे इत्थिन्द्रियरूपं उप्पज्जति, तस्स सन्ताने चतूहि कम्मादीहि पच्चयेहि उप्पन्ना पञ्चक्खन्ध धम्मा इत्थिभावाय परिणमन्ति, सो अत्तभावो एकन्तेन इत्थिलिङ्ग इत्थिनिमित्त इत्थिकुत्त इत्थाकप्पयुत्तो होति, नो अञ्ञथा। न च इत्थिन्द्रियरूपं ते पञ्चक्खन्धधम्मे जनेति, न च उपत्थम्भति, नापि अनुपालेति, अथ खो ते धम्मा अत्तनो अत्तनो पच्चयेहि उप्पज्जमाना एवञ्चेवञ्च उप्पज्जन्तूति आणं ठपेन्तं विय तेसु अत्तनो अनुभावं पवत्तेति। ते च धम्मा तथेव उप्पज्जन्ति, नो अञ्ञथाति अयं इत्थिन्द्रियरूपस्स इत्थिलिङ्गादीसु इस्सरता। एस नयो पुरिसिन्द्रियरूपस्स पुरिसलिङ्गादीसु इस्सरतायं। एवं एते द्वे धम्मा लिङ्गादीसु इन्द्रियकिच्च सब्भावतो इन्द्रिया नाम होन्तीति।

[B 490] हदयवत्थुरूपं पन द्विन्नं विञ्ञाणधातूनं निस्सयवत्थुकिच्चं साधयमानंपि तासु इन्द्रियकिच्चं न साधेति। न हि भावित चित्तस्स पुग्गलस्स हदयरूपे पसन्नेवा वा जातेपि मनोविञ्ञाणधातुयो तदनुवत्तिका होन्तीति।

।। इन्द्रियपच्च्यदीपना निट्ठिता ।।

१७. झानपच्चयो

सत्त झानङ्गानि झानपच्चयो, वितक्को विचारो पीति सोमनस्सं दोमनस्सं उपेक्खा एकग्गता। तेहि सहजाता पञ्चविञ्ञाणवज्जिता चित्तचेतसिकधम्मा च रूपधम्मा च तस्स पच्चयुप्पन्ना।

केनट्ठेन झानन्ति। उपनिज्झायनट्ठेन झानं। उपनिज्झायनट्ठेनाति च मनसा आरम्मणं उपगन्त्वा निज्झायनट्ठेन पेक्खनट्ठेन[1]। यथा हि इस्सासो दूरे ठत्वा खुद्दके लक्खमण्डले सरं पवेसेन्तो हत्थेहि सरं उजुकञ्च निच्चलञ्च कत्वा मण्डलञ्च विभूतं कत्वा चक्खुना निज्झायन्तो पवेसेति। एवमेव इमेहि अङ्गेहि चित्तं उजुकञ्च निच्चलञ्च कत्वा आरम्मणञ्च विभूतं कत्वा निज्झायन्तो पुग्गलो उपनिज्झायतीति वुच्चति। एवं उपनिज्झायित्वा यंकिञ्चि कायकम्मं वा वचीकम्मं वा मनोकम्मं वा करोन्तो अविरज्झमानो करोति।

तत्थ कायकम्मं नाम अभिक्कमप्पटिक्कमादिकं वुच्चति। वचीकम्मं नाम अक्खरवण्णपरिपुण्णं वचीभेदकरणं वुच्चति। मनोकम्मं नाम यंकिञ्चि मनसा आरम्मणविभावनं वुच्चति। दानकम्मं वा पाणातिपात कम्मं वा अनुरूपेहि झानङ्गेहि विना दुब्बलेन चित्तेन कातुं न सक्का होति। एस नयो सेसेसु कुसलाकुसलकम्मेसूति।

अयञ्च अत्थो वितक्कादीनं झानङ्गधम्मानं विसुं विसुं सभाव लक्खणेहि दीपेतब्बो। सम्पयुत्तधम्मे आरम्मणाभिनिरोपन लक्खणो वितक्को, सो चित्तं आरम्मणे दळ्हं नियोजेति। आरम्मणनुमज्जनलक्खणो विचारो, सो चित्तं आरम्मणे दळ्हं संयोजेति। आरम्मणसम्पियायनलक्खणापीति, सा चित्तं आरम्मणे परितुट्ठं करोति। तिस्सोपि वेदना आरम्मणरसानुभवनलक्खणा, तापि चित्तं आरम्मणे इट्ठानिट्ठमज्झत्तरसानुभवन किच्चेन दळ्हप्पटिबद्धं करोन्ति। समाधानलक्खणा एकग्गता, सापि चित्तं आरम्मणे निच्चलं कत्वा ठपेतीति।

।। झानपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१८. मग्गपच्चयो

द्वादस मग्गङ्गानि मग्गपच्चयो सम्मादिट्ठि सम्मासङ्कप्पो सम्मावाचा [B 491] सम्माकम्मन्तो सम्माआजीवो सम्मावायामो सम्मासति सम्मासमाधि मिच्छादिट्ठि मिच्छासङ्कप्पो मिच्छावायामो मिच्छासमाधि[2]। सेसा मिच्छावाचा मिच्छाकम्मन्तो

१. 'उपनिज्झायनट्ठेन उपकारकानि ठपेत्वा द्विपञ्चविञ्ञाणेसु कायिक-सुखदुक्खवेदनाद्वयं सब्बानि पि कुसलादिभेदानि सत्त झानङ्गानि झान पच्चयो'। (प.अ., पृ. ७८)

२. 'यतो ततो वा निय्यानट्ठेन उपकारकानि कुसलादिभेदानि द्वादसमग्गङ्गानि मग्गपच्चयो'। (प.अ., पृ. ७८)

मिच्छाआजीवोति तयो धम्मा विसुं चेतसिकधम्मा न होन्ति। मुसावादादिवसेन पवत्तानं चतुन्नं अकुसलखन्धानं नामं। तस्मा ते मग्गपच्चये विसुं न गहिताति। सब्बे सहेतुका चित्त चेतसिकधम्मा च सहेतुकचित्तसहजाता रूपधम्मा च तस्स पच्चयुप्पन्ना।

केनट्ठेन मग्गोति। सुगतिदुग्गतिनिब्बान दिसादेससम्पापनट्ठेन मग्गो। सम्मादिट्ठिआदिकानि हि अट्ठ सम्मामग्गङ्गानि सुगति दिसादेसञ्च निब्बानदिसादेसञ्च सम्पापनत्थाय संवत्तन्ति। चत्तारि मिच्छामग्गङ्गानि दुग्गतिदिसादेसं सम्पापनत्थाय संवत्तन्तीति।

तत्थ झानपच्चयो आरम्मणे चित्तं उजुं करोति, थिरं करोति, अप्पनापत्तं करोति। अप्पनापत्तं नाम गम्भीरे उदके पक्खित्तो मच्छोविय कसिणनिमित्तादिके निमित्तारम्मणे अनुपविट्ठं चित्तं पवुच्चति। मग्गपच्चयो वट्टपथे चेतनाकम्मं विवट्टपथे भावनाकम्मं उजुं करोति, थिरं करोति, कम्मपथपत्तं करोति, वुड्ढि विरुळ्हि वेपुल्लं करोति, भूमन्तरपत्तं करोति। अयमेतेसं द्विन्नं पच्चयानं विसेसो।

तत्थ कम्मपथपत्तं नाम पाणातिपातादीनं कुसलाकुसल कम्मानं अङ्गपारिपूरिया पटिसन्धिजनने समत्थभावसङ्खातं कम्मगतिं पत्तं चेतनाकम्मं। भूमन्तरपत्तं नाम भावनानुक्कमेन काम भूमितो पट्ठाय याव लोकुत्तरभूमिया एकस्मिंइरियापथेपि उपरूपरिभूमिं पत्तं भावनाकम्मं। अयञ्च अत्थो झानपच्चये वुत्तनयेन सम्मादिट्ठिआदिकानं मग्गङ्गधम्मानं विसुं विसुं सभाव लक्खणेहि दीपेतब्बोति।

।। मग्गपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

१९. सम्पयुत्तपच्चयो

सम्पयुतपच्चयो विप्पयुत्तपच्चयोति एकं दुक्कं। अत्थि पच्चयो नत्थि पच्चयोति एकं दुक्कं। विगतपच्चयो अविगत पच्चयोति एकं दुक्कं। इमानि तीणि पच्चयदुक्कानि विसुं पच्चय विसेसानि न होन्ति। पुब्बे आगतेसु पच्चयेसु केचि पच्चया अत्तनो पच्चयुप्पन्नेहि सम्पयुत्ता हुत्वा पच्चयत्तं गच्छन्ति, केचि विप्पयुत्ता हुत्वा, केचि विज्जमाना हुत्वा, केचि अविज्जमाना हुत्वा, केचि विगता हुत्वा, केचि अविगता हुत्वा पच्चयत्तं गच्छन्तीति दस्सनत्थं इमानि तीणि पच्चयदुक्कानि वुत्तानि।

[B 492] एत्थ च अत्थीति खो कच्चान `अयमेको अन्तो, नत्थीति खो दुतियो अन्तोति एवरूपेसु ठानेसु अत्थिनत्थिसद्दा सस्सतुच्छेदेसुपवत्तन्ति, तस्मा एवरूपानं अत्थानं निवत्तनत्थं पुन विगतदुक्कं वुत्तं।

सब्बेपि सहजाता चित्तचेतसिका धम्मा अञ्ञमञ्ञस्स पच्चया चेव होन्ति पच्चयुप्पन्ना च।

केनट्ठेन सम्पयुत्तो। एकुप्पादता एकनिरोधता एकवत्थुकता एकारम्मणताति इमेहि चतूहि सम्पयोगङ्गेहि समन्नागतो हुत्वा संयुत्तो एकीभावं गतोति सम्पयुत्तो[1]।

तत्थ एकीभावं गतोति चक्खुविञ्ञाणं फस्सादीहि सत्तहि चेतसिकेहि सह एकीभावं गतं होति, दस्सनन्ति एकं वोहारं गच्छति। अट्ठ धम्मा विसुं विसुं वोहारं न गच्छन्ति, विनिब्भुज्जित्वा विञ्ञातुं न सक्कोति। एस नयो सेसेसु सब्बचित्तुप्पादेसूति।

।। सम्पयुत्तपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

२०. विप्पयुत्तपच्चयो

चतुब्बिधो विप्पयुत्तपच्चयो, सहजातो वत्थुपुरेजातो वत्थारम्मणपुरेजातो पच्छाजातोति।

तत्थ सहजातविप्पयुत्तो नाम द्विसु सहजातपच्चय पच्चयुप्पन्नेसु नामरूपेसु नामं वा रूपस्स रूपं वा नामस्स विप्पयुत्तं हुत्वा पच्चयो। तत्थ नामन्ति पवत्तिकाले चतुक्खन्धनामं, रूपस्साति चित्तजरूपस्स, रूपन्ति पटिसन्धिक्खणे हदयवत्थुरूपं, नामस्साति पटिसन्धिचतुक्खन्धनामस्स। सेसा तयोपि विप्पयुत्तपच्चया पुब्बे विभत्ता एवाति।

।। विप्पयुत्तपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

२१. अत्थिपच्चयो

सत्तविधो अत्थिपच्चयो, सहजातत्थिपच्चयो वत्थुपुरेजातत्थिपच्चयो आरम्मणपुरेजातत्थिपच्चयो वत्थारम्मणपुरेजातत्थिपच्चयो पच्छाजातत्थिपच्चयो रूपाहारत्थिपच्चयो रूपजीवितिन्द्रियत्थिपच्चयोति[2]।

तत्थ सहजातपच्चयो एव सहजातत्थिपच्चयो नाम। एस नयो सेसेसु छसु। पच्चयपच्चयुप्पन्नविभागोपि हेट्ठा तत्थ तत्थ वुत्तोयेव।

[B 493] केनट्ठेन अत्थिपच्चयो। सयं खणिकपच्चुप्पन्नता सङ्खातेन अत्थिभावेन पच्चुप्पन्नस्स धम्मस्स पच्चयो अत्थिपच्चयो।

।। अत्थिपच्चयदीपना निट्ठिता ।।

---

१. 'एकवत्थुका-एकारम्मण-एकुप्पादकनिरोधसङ्खातेना सम्पयुत्तभावेन उपकारक अरूपधम्म सम्पयुत्तपच्चयो'। (प.अ., पृ. ७८)

२. 'अत्थि पच्चयो ति कबलिङ्काराहारारम्मणपुरेजातानि चेव निस्सयपच्चये वुत्तधम्मा च'। (अभिधम्मावतार, पृ. २००)

२२. नत्थिपच्चयो

२३. विगतपच्चयो

२४. अविगतपच्चयो

सब्बो अनन्तरपच्चयो नत्थि पच्चयो नाम। तथा विगत पच्चयो। अविगतपच्चयोपि अत्थिपच्चयेन सब्बसदिसो। अत्थीतिच अविगतोति च अत्थतो एकमेव। तथा नत्थीति च विगतोतिच।

नत्थिविगतअविगतपच्चयदीपना निट्ठिता।

।। पच्चयत्थदीपना निट्ठिता ।।

२. पच्चयसभागो नाम दुतियो परिच्छेदो

पच्चयसभागो वुच्चते[१]। पञ्चदस सहजातजातिका होन्ति, चत्तारो महासहजाता चत्तारो मज्झिमसहजाता सत्त खुद्दकसहजाता। तत्थ चत्तारो महासहजाता नाम सहजातो सहजातनिस्सयो सहजातत्थि सहजात अविगतो। चत्तारो मज्झिमसहजाता नाम अञ्ञमञ्ञो विपाको सम्पयुत्तो सहजातविप्पयुत्तो। सत्त खुद्दक सहजाता नाम हेतु सहजाताधिपति सहजातकम्मं सहजाताहारो सहजातिन्द्रियं झानं मग्गो।

तयो रूपाहारा, रूपाहारो रूपाहारत्थि रूपाहारा विगतो।

तीणि रूपजीवितिन्द्रियानि, रूपजीवितिन्द्रियं रूपजीवितिन्द्रियत्थि रूपजीवितिन्द्रियाविगतं।

सत्तरस पुरेजातजातिका होन्ति, छ वत्थुपुरेजाता छ आरम्मणपुरेजाता पञ्च वत्थारम्मणपुरेजाता। तत्थ छ वत्थुपुरेजाता नाम वत्थुपुरेजातो वत्थुपुरेजातनिस्सयो वत्थुपुरेजातिन्द्रियं वत्थुपुरेजातविप्पयुत्तं वत्थुपुरेजातत्थि वत्थु पुरेजातअविगतो। छ आरम्मणपुरेजाता नाम आरम्मण पुरेजातो किञ्चिआरम्मणं कोचि आरम्मणाधिपति [B 494] कोचि आरम्मणूपनिस्ससो आरम्मणपुरेजातत्थि आरम्मणपुरेजात अविगतो। किञ्चि आरम्मणन्तिआदीसु किञ्चिकोचिवचनेहि पच्चुप्पन्नं निप्फन्नरूपं गय्हति। पञ्च वत्थारम्मणपुरेजाता नाम वत्थारम्मण पुरेजातो वत्थारम्मणपुरेजातनिस्सयो वत्थारम्मणपुरेजात विप्पयुत्तो वत्थारम्मणपुरेजातत्थि वत्थारम्मणपुरेजात अविगतो।

चत्तारो पच्छाजातजातिका होन्ति, पच्छाजातो पच्छाजातविप्पयुत्तो पच्छाजातत्थि पच्छाजातअविगतो।

---

१. 'पच्चयसभागतो ति एतेसु हि चतुवीसतिया पच्चयेसु अनन्तर-समन्तर-अनन्तररूपनिस्सय-आसेवन-नत्थि-विगता सभागा, तथा आरम्मण-आरम्मणाधिपति आरम्मणूपनिस्सया ति इमिना उपायेनेत्थ पच्चयसमागतो ति विञ्ञातब्बो विनिच्छयो'। (प. अ., पृ. १२३)

सत्त अनन्तरा होन्ति, अनन्तरो समनन्तरो अनन्तरूपनिस्सयो आसेवनं अनन्तरकम्मं नत्थि विगतो। एत्थ च अनन्तर कम्मं नाम अरियमग्गचेतना, सा अत्तनो अनन्तरे अरियफलं जनेति।

पञ्च विसुं पच्चया होन्ति, अवसेसं आरम्मणं अवसेसो आरम्मणाधिपति अवसेसो आरम्मणूपनिस्सयो सब्बो पकतूपनिस्सयो अवसेसं नानाक्खणिक कम्मं। इति वित्थारतो पट्ठानपच्चया चतुपञ्ञासप्पभेदा होन्तीति।

तत्थ सब्बे सहजातजातिका च सब्बे पुरेजातजातिका सब्बे पच्छाजातजातिका रूपाहारो रूपजीवितिन्द्रियन्ति इमे पच्चुप्पन्नपच्चया नाम। सब्बे अनन्तरजातिका सब्बं नानाक्खणिक कम्मन्ति इमे अतीतपच्चया नाम। आरम्मणं पकतूपनिस्सयोति इमे तेकालिका च निब्बानपञ्ञत्तीनं वसेन कालविमुत्ता च होन्ति।

निब्बानञ्च पञ्ञत्ति चाति इमे द्वे धम्मा अप्पच्चया नाम असङ्खता नाम। कस्मा। अजातिकत्ता। येसञ्हि जाति नाम अत्थि, उप्पादो नाम अत्थि। ते सप्पच्चयानाम सङ्खता नाम पटिच्चसमुप्पन्ना नाम। इमे द्वे धम्मा अजातिकत्ता अनुप्पादत्ता अजातिपच्चयत्ता च अप्पच्चया नाम असङ्खता नामाति।

सप्पच्चयेसु च धम्मेसु सङ्खतेसु एकोपि धम्मो निच्चो धुवो सस्सतो अविपरीतधम्मो नाम नत्थि। अथ खो सब्बे ते खयट्ठेन अनिच्चा एव होन्ति। कस्मा। सयञ्च पच्चयायत्तवुत्ति कत्ता पच्चयानञ्च अनिच्चधम्मत्ता। ननु निब्बानञ्च पञ्ञत्ति च पच्चया होन्ति। ते च निच्चा धुवाति। सच्चं। केवलेन पन निब्बानपच्चयेन वा पञ्ञत्तिपच्चयेन वा उप्पन्नो नाम नत्थि, बहूहि पच्चयेहि एव उप्पन्नो, ते पन पच्चया अनिच्चा एव अधुवाति।

[B 495] ये च धम्मा अनिच्चा होन्ति, ते निच्चकालं सत्ते तिविधेहि दुक्खदण्डेहि पटिप्पीळेन्ति बाधेन्ति, तस्मा ते धम्मा भयट्ठेन दुक्खा एव होन्ति। तत्थ तिविधा दुक्खदण्डा नाम दुक्खदुक्खता सङ्खार दुक्खता विपरिणामदुक्खता।

ये केचि अनिच्चा एव होन्ति, एकस्मिं इरियापथेपि पुनप्पुनं भिज्जन्ति, ते कथं यावजीवं निच्चसञ्ञितानं सत्तपुग्गलानं अत्ता नाम भवेय्युं, सारा नाम भवेय्युं। ये च दुक्खा एव होन्ति, ते कथं दुक्खप्पटिकुलानं सुखकामानं सत्तानं अत्ता नाम भवेय्युं, सारा नाम भवेय्युं। तस्मा ते धम्मा असारकट्ठेन अनत्ता एव होन्ति।

अपि च यस्मा इमाय चतुवीसतिया पच्चयदेसनाय इममत्थं दस्सेति। सब्बेपि सङ्खतधम्मा नाम पच्चयायत्तवुत्तिका एव होन्ति, सत्तानं वसायत्तवुत्तिका न

होन्ति। पच्चयायत्त वुत्तिकेसु च तेसु न एकोपि धम्मो अप्पकेन पच्चयेन उप्पज्जति। अथ खो बहूहि एव पच्चयेहि उप्पज्जतीति, तस्मा अयं देसना धम्मानं अनत्तलक्खणदीपने मत्थकपत्ता होतीति।

।। पच्चयसभागसङ्गको निट्ठितो ।।

३. पच्चयघटनानयो नाम ततियो परिच्छेदो

१. पञ्चविञ्ञाणेसु पच्चयघटनानयो

पच्चघटनानयो वुच्चते। एकेकस्मिं पच्चयुप्पन्ने बहुन्नं पच्चयानं समोधानं पच्चयघटना नाम। येन पन धम्मा सप्पच्चया सङ्खता पटिच्चसमुप्पन्नाति वुच्चन्ति, सब्बे ते धम्मा उप्पादे च ठितियञ्च इमेहि चतुवीसतिया पच्चयेहि सहितत्ता सप्पच्चया नाम, सप्पच्चयत्ता सङ्खता नाम, सङ्खतत्ता पटिच्चसमुप्पन्ना नाम। कतमे पन ते धम्माति। एकवीससतचित्तानि च द्विपञ्ञासचेतसिकानि च अट्ठवीसति रूपानि च।

तत्थ एकवीससतचित्तानि धातुवसेन सत्तविधानि भवन्ति, चक्खु विञ्ञाण-धातु सोतविञ्ञाणधातु घानविञ्ञाणधातु जिव्हविञ्ञाणधातु कायविञ्ञाणधातु मनोधातु मनोविञ्ञाणधातूति। तत्थ चक्खुविञ्ञाणद्वयं चक्खुविञ्ञाणधातु नाम। सोतविञ्ञाणद्वयं सोतविञ्ञाणधातु नाम। घानविञ्ञाणद्वयं घानविञ्ञाणधातु नाम। [B 496] जिव्हविञ्ञाणद्वयं जिव्हविञ्ञाणधातु नाम। कायविञ्ञाणद्वयं कायविञ्ञाणधातु नाम। पञ्चद्वारावज्जन चित्तञ्च सम्पटिच्छनचित्तद्वयञ्च मनोधातु नाम। सेसानि अट्ठसतं चित्तानि मनोविञ्ञाणधातु नाम।

द्विपञ्ञासचेतसिकानि च रासिवसेन चतुब्बिधानि भवन्ति, सत्त सब्ब-चित्तिकानि च छ पकिण्णकानि च चुद्दस पापानिच पञ्चवीसति कल्याणानि च।

चतुवीसतिपच्चयेसु च पन्नरसपच्चया सब्बचित्तुप्पाद साधारणा होन्ति, आरम्मणञ्च अनन्तरञ्च समनन्तरञ्च सहजातो च अञ्ञमञ्ञञ्च निस्सयो च उपनिस्सयो च कम्मञ्च आहारो च इन्द्रियञ्च सम्पयुत्तो च अत्थि च नत्थि च विगतो च अविगतो च। न हि किञ्चि चित्तं वा चेतसिकं वा आरम्मणेन विना उप्पन्नं नाम अत्थि। तथा अनन्तरादीहि च। अट्ठपच्चया केसञ्चि चित्तुप्पादानं पच्चया साधारणा होन्ति, हेतु च अधिपति च पुरेजातो च आसेवनञ्च विपाको च झानञ्च मग्गो च विप्पयुत्तो च। तत्थ हेतु सहेतुकचित्तुप्पादानं एव साधारणा, अधिपति च साधिपतिजवनानं एव, पुरेजातो च केसञ्चि चित्तुप्पादानं एव, आसेवनञ्च कुसलाकुसलकिरियजवनानं एव, विपाको च विपाकचित्तुप्पादानं एव, झानञ्च

मनोधातु मनोविञ्ञाणधातु चित्तुप्पादानं एव, मग्गो च सहेतुकचित्तुप्पादानं एव, विप्पयुत्तो च अरूपलोके चित्तुप्पादानं नत्थि, एको पच्छाजातो रूपधम्मानं एव विसुंभूतो होति।

तत्रायं दीपना। सत्त सब्बचित्तिकानि चेतसिकानि नाम, फस्सो वेदना सञ्ञा चेतना एकग्गता जीवितं मनसिकारो। तत्थ चित्तं अधिपतिजातिकञ्च आहारपच्चयो च इन्द्रियपच्चयो च। फस्सो आहारपच्चयो। वेदना इन्द्रियपच्चयो च झान पच्चयो च। चेतना कम्मपच्चयो च आहारपच्चयो च। एकग्गता इन्द्रियपच्चयो च झान पच्चयो च मग्गपच्चयो च। जीवितं इन्द्रियपच्चयो। सेसा द्वे धम्मा विसेसपच्चया न होन्ति।

चक्खुविञ्ञाणे सत्त सब्बचित्तिकानि चेतसिकानि लब्भन्ति, विञ्ञाणेन सद्धिं अट्ठ नामधम्मा होन्ति। सब्बे ते धम्मा सत्तहि पच्चयेहि अञ्ञमञ्ञस्स पच्चया होन्ति चतूहि महासहजातेहि च विप्पयुत्तवज्जितेहि तीहि मज्झिमसहजातेहि च। तेस्वेव अट्ठसु धम्मेसु विञ्ञाणं सेसानं सत्तन्नं धम्मानं आहारपच्चयेन च इन्द्रियपच्चयेन च पच्चयो होति। फस्सो आहारपच्चयेन, वेदना इन्द्रियपच्चय-मत्तेन, चेतना कम्मपच्चयेन च आहार पच्चयेन च, एकग्गता [B 497] इन्द्रियपच्चयमत्तेन जीवितं सेसानं सत्तन्नं धम्मानं इन्द्रियपच्चयेन पच्चयो होति। चक्खुवत्थुरूपं पन तेसं अट्ठन्नं धम्मानं छहि वत्थुपुरेजातेहि तस्मिं चक्खुवत्थुम्हि आपातमागतानि पच्चुप्पन्नानि रूपारम्मणानि तेसं चतूहि आरम्मण पुरेजातेहि, अनन्तरनिरुद्धं पञ्चद्वारावज्जनचित्तञ्च पञ्चहि अनन्तरेहि, पुब्बे कतं कुसलकम्मं वा अकुसलकम्मं वा कुसलविपाकानं वा अकुसलविपाकानं वा तेसं नानाक्खणिककम्मपच्चयेन, कम्म सहायभूतानि पुरिमभवे अविज्जातण्हूपादानानि च इमस्मिं भवे आवासपुग्गलउतुभोजनादयो च तेसं अट्ठन्नं धम्मानं पकतूपनिस्सयपच्चयेन पच्चया होन्ति। इमस्मिं चित्ते हेतु च अधिपति च पच्छाजातो च आसेवनञ्च झानञ्च मग्गोचाति छपच्चया न लब्भन्ति, अट्ठारसपच्चया लब्भन्ति। यथा च इमस्मिं चित्ते, तथा सोतविञ्ञाणादीसुपि छ पच्चया न लब्भन्ति, अट्ठारसपच्चया लब्भन्तीति।

।। पञ्चविञ्ञाणेसु पच्चयघटनानयो निट्ठितो ।।

२. अहेतुक चित्तुप्पादेसु पच्चयघटनानयो

छ पकिण्णकानि चेतसिकानि नाम, वितक्को विचारो अधिमोक्खो वीरियं पीति छन्दो। तत्थ वितक्को झानपच्चयो च मग्गपच्चयो च। विचारो झानपच्चयो।

वीरियं अधिपतिजातिकञ्च इन्द्रियपच्चयो च मग्गपच्चयो च। पीति झानपच्चयो। छन्दो अधिपतिजातिको। अधिमोक्खो पन विसेसपच्चयो न होति।

पञ्चद्वारावज्जनचित्तञ्च सम्पटिच्छनचित्तद्वयञ्च उपेक्खासन्तीरण द्वयञ्चाति पञ्चसु चित्तेसु दस चेतसिकानि लब्भन्ति, सत्त सब्ब चित्तिकानि च पकिण्णकेसु वितक्को च विचारो च अधिमोक्खो च। विञ्ञाणेन सद्धिं पच्चेकं एकादस नामधम्मा होन्ति। इमेसु चित्तेसु झानकिच्चं लब्भति। वेदना च एकग्गता च वितक्को च विचारो च झानपच्चयं साधेन्ति। पञ्चद्वारावज्जनचित्तं पन किरियचित्तं होति, विपाकपच्चयो नत्थि। नानाक्खणिककम्मञ्च उपनिस्सयट्ठाने तिट्ठति। विपाकपच्चयेन सद्धिं छ पच्चया न लब्भन्ति। झानपच्चयेन सद्धिं अट्ठारसपच्चया लब्भन्ति। सेसेसु चतूसु विपाकचित्तेसु पञ्च पच्चया न लब्भन्ति। विपाकपच्चयेन च झानपच्चयेन च सद्धिं एकूनवीसति पच्चया लब्भन्ति।

सोमनस्ससन्तीरणे पीतिया सद्धिं एकादसचेतसिका युज्जन्ति, [B 498] मनोद्वारावज्जनचित्ते च वीरियेन सद्धिं एकादसाति विञ्ञाणेन सद्धिं द्वादस नामधम्मा होन्ति। हसितुप्पादचित्ते पन पीतिया च वीरियेन च सद्धिं द्वादस चेतसिकानि युज्जन्ति। विञ्ञाणेन सद्धिं तेरस नामधम्मा होन्ति। तत्थ सोमनस्ससन्तीरणे झानङ्गेसु पीतिमत्तं अधिकं होति, पुब्बे उपेक्खासन्तीरणद्वये विय पञ्चपच्चया न लब्भन्ति। एकूनवीसतिपच्चया लब्भन्ति। मनोद्वारावज्जनचित्ते च वीरियमत्तं अधिकं होति, तञ्च इन्द्रियकिच्च झान किच्चानिसाधेति। अधिपतिकिच्चञ्च मग्गकिच्चञ्च न साधेति। किरिय चित्तत्ताविपाकपच्चयो च नत्थि। पुब्बे पञ्चद्वारावज्जनचित्ते विय विपाक पच्चयेन सद्धिं छ पच्चया न लब्भन्ति। झानपच्चयेन सद्धिं अट्ठरस पच्चया लब्भन्ति। हसितुप्पादचित्तेपि किरियचित्तत्ता विपाकपच्चयो नत्थि, जवनचित्तत्ता पन आसेवनं अत्थि, विपाकपच्चयेन सद्धिं पञ्च पच्चया न लब्भन्ति। आसेवनपच्चयेन सद्धिं एकूनवीसति पच्चया लब्भन्ति।

।। अहेतुकचित्तुप्पादेसु पच्चयघटनानयो निट्ठितो ।।

३. अकुसलचित्तुप्पादेसु पच्चयघटनानयो

द्वादस अकुसलचित्तानि, द्वे मोहमूलिकानि अट्ठ लोभमूलिकानि द्वे दोसमूलिकानि। चुद्दस पापचेतसिकानि नाम मोहो अहिरिकं अनोत्तप्पं उद्धच्चन्ति इदं मोहचतुक्कं नाम। लोभो दिट्ठि मानोति इदं लोभतिक्कं नाम। दोसो इस्सा मच्छरियं कुक्कुच्चन्ति इदं दोसचतुक्कं नाम। थिनं मिद्धं विचिकिच्छाति इदं विसुं तिक्कं नाम।

तत्थ लोभो दोसो मोहोति तयो मूलधम्मा हेतुपच्चया, दिट्ठि मग्गपच्चयो, सेसा दसधम्मा विसेसपच्चया न होन्ति।

तत्थ द्वे मोहमूलिकानि नाम विचिकिच्छासम्पयुत्तचित्तं उद्धच्चसम्पयुत्तचित्तं। तत्थ विचिकिच्छासम्पयुत्तचित्ते पन्नरस चेतसिकानि उप्पज्जन्ति सत्त सब्बचित्तिकानि च वितक्को विचारो वीरियन्ति तीणि पकिण्णकानि च पापचेतसिकेसु मोहचतुक्कञ्च विचिकिच्छा चाति, चित्तेन सद्धिं सोळस नामधम्मा होन्ति। इमस्मिं चित्ते हेतु पच्चयोपि मग्गपच्चयोपि लब्भन्ति। तत्थ मोहो हेतुपच्चयो, वितक्को च वीरियञ्च मग्गपच्चयो, एकग्गता पन विचिकिच्छाय दुट्ठत्ता इमस्मिं चित्ते इन्द्रियकिच्चञ्च मग्गकिच्चञ्च न साधेति, झानकिच्चमत्तं साधेति। अधिपति च पच्छाजातो विपाको चाति तयो पच्चयान लब्भन्ति, सेसा एकवीसतिपच्चया लब्भन्ति। उद्धच्चसम्पयुत्तचित्तेपि विचिकिच्छं पहाय अधिमोक्खेन सद्धिं पन्नरसेव [B 499] चेतसिकानि, सोळसेव नामधम्मा होन्ति इमस्मिं चित्ते एकग्गता इन्द्रिय किच्चञ्च झानकिच्चञ्च मग्गकिच्चञ्च साधेति, तयो पच्चया न लब्भन्ति, एकवीसति पच्चया लब्भन्ति।

अट्ठसु लोभमूलिकचित्तेसु पन सत्त सब्बचित्तिकानि च छ पकिण्णकानि च पापेसु मोहचतुक्कञ्च लोभतिक्कञ्च थिनमिद्धञ्चाति द्वावीसति चेतसिकानि उप्पज्जन्ति। तेसु लोभो च मोहोचाति द्वे मूलानि हेतुपच्चयो। छन्दो च चित्तञ्च वीरियञ्चाति तयो अधिपतिजातिका कदाचि अधिपतिकिच्चं साधेन्ति, आरम्मणाधिपतिपि एत्थ लब्भति। चेतना कम्मपच्चयो। तयो आहारा आहारपच्चयो। चित्तञ्च वेदना च एकग्गता च जीवितञ्च वीरियञ्चाति पञ्च झानङ्गानि झानपच्चयो। वितक्को च एकग्गता च दिट्ठि च वीरियञ्चाति चत्तारि मग्गङ्गानि मग्गपच्चयो। पच्छाजातो च विपाको चाति द्वे पच्चया न लब्भन्ति। सेसा द्वावीसति पच्चया लब्भन्ति।

द्वीसु दोसमूलिकचित्तेसु पीतिञ्च लोभतिक्कञ्च पहाय दोसचतुक्केन सद्धिं द्वावीसति एव चेतसिकानि, दोसो च मोहो च द्वे मूलानि, तयो अधिपति जातिका, तयो आहारा, पञ्च इन्द्रियानि, चत्तारि झानङ्गानि, तीणि मग्गङ्गानि। एत्थापि द्वे पच्चया न लब्भन्ति, द्वावीसति पच्चया लब्भन्ति।

।। अकुसलचित्तुप्पादेसु पच्चयघटनानयो निट्ठितो ।।

४. चित्तुप्पादेसु पच्चयघटनानयो

एकनवुति सोभणचित्तानि नाम, चतुवीसति काम सोभणचित्तानि पन्नरस रूपचित्तानि द्वादस अरूपचित्तानि चत्तालीस लोकुत्तरचित्तानि। तत्थ चतुवीसति

कामसोभण चित्तानि नाम अट्ठ कामकुसलचित्तानि अट्ठ कामसोभणविपाक चित्तानि अट्ठ कामसोभणकिरियचित्तानि।

पञ्च वीसति कल्याणचेतसिकानि नाम, अलोभो अदोसो अमोहोचेति तीणि कल्याणमूलिकानि च सद्धा च सति च हिरी च ओत्तप्पञ्च तत्रमज्झत्तता च कायपस्सद्धि च चित्त पस्सद्धि च कायलहुता च चित्तलहुता च कायमुदुता च चित्त मुदुता च कायकम्मञ्ञता च चित्त कम्मञ्ञता च कायपागुञ्ञता [B 500] च चित्तपागुञ्ञता च कायुजुकता च चित्तुजुकता च सम्मावाचा सम्माकम्मन्तो सम्माआजीवोति तिस्सो विरतियो च करुणा मुदितााति द्वे अप्पमञ्ञायो च।

तत्थ तीणि कल्याणमूलानि हेतुपच्चयो, अमोहो पन अधिपतिपच्चये वीमंसाधिपतिनाम, इन्द्रियपच्चये पञ्ञिन्द्रियं नाम, मग्गपच्चये सम्मादिट्ठि नाम। सद्धा इन्द्रियपच्चये सद्धिन्द्रियं नाम। सति इन्द्रियपच्चये सतिन्द्रियं नाम, मग्गपच्चये सम्मासति नाम। तिस्सो विरतियो मग्गपच्चयो, सेसा सत्तरस धम्मा विसेसपच्चया न होन्ति।

अट्ठसु कामकुसलचित्तेसु अट्ठतिंस चेतसिकानि सङ्गय्हन्ति, सत्त सब्बचित्तिकानि छ पकिण्णकानि पञ्चवीसति कल्याणानि। तेसु च पीति चतूसु सोमनस्सिकेसु एव, अमोहो चतूसु ञाणसम्पयुत्तेसु एव, तिस्सो विरतियो सिक्खापदसीलपूरण काले एव, द्वे अप्पमञ्ञायो सत्तेसु कारुञ्ञमोदनाकारेसु एवाति। इमेसुपि अट्ठसु चित्तेसु द्वे वा तीणि वा कल्याणमूलानि हेतुपच्चयो, छन्दो च चित्तञ्च वीरियञ्च वीमंसा चाति चतूसु अधिपतिजातिकेसु एकमेकोव कदाचि अधिपतिपच्चयो। चेतना कम्मपच्चयो। तयो आहारा आहारपच्चयो। चित्तञ्च वेदना च एकग्गता च जीवितञ्च सद्धा च सति च वीरियञ्च पञ्ञाचाति अट्ठ इन्द्रियानि इन्द्रियपच्चयो। वितक्को च विचारो च पीति च वेदना च एकग्गताचाति पञ्चझानङ्गानि झानपच्चयो। पञ्ञा च वितक्को च तिस्सो विरतियो च सति च वीरियञ्च एकग्गताचाति अट्ठ मग्गङ्गानि मग्गपच्चयो। इमेसुपि अट्ठसु चित्तेसु पच्छाजातो च विपाकोचाति द्वे पच्चया न लब्भन्ति, सेसा द्वावीसतिपच्चया लब्भन्ति।

अट्ठसु कामसोभणकिरियचित्तेसु तिस्सो विरतियो न लब्भन्ति, कुसलेसु विय द्वे पच्चया न लब्भन्ति, द्वावीसति पच्चया लब्भन्ति।

अट्ठसु कामसोभणविपाकेसु तिस्सो विरतियो च द्वे अप्पमञ्ञायो च न लब्भन्ति। अधिपतिपच्चयो च पच्छाजातो च आसेवनञ्चाति तयो पच्चया न लब्भन्ति, एकवीसति पच्चया लब्भन्ति।

उपरि रूपारूपलोकुत्तरचित्तेसुपि द्वावीसतिपच्चयतो अतिरेकं नत्थि। तस्मा चतूसु ञाणसम्पयुत्तकामकुसलचित्तेसु विय इमेसु पच्चयघटना वेदितब्बा।

एवं सन्ते कम्मा तानि चित्तानि कामचित्ततो महन्त तरानि च पणीततरानि [B 501] च होन्तीति। आसेवनमहन्तत्ता। तानि हि चित्तानि भावनाकम्मविसेसेहि सिद्धानि होन्ति, तस्मा तेसु आसेवनपच्चयो महन्तो होति। आसेवन महन्तत्ता च इन्द्रियपच्चयोपि झानपच्चयोपि मग्गपच्चयोपि अञ्ञेपि वा तेसं पच्चया महन्ता होन्ति। पच्चयानं उपरूपरि महन्तत्ता तानि चित्तानि उपरूपरि च कामचित्ततो महन्ततरानि च पणीततरानि च होन्तीति।

।। चित्तुप्पादेसु पच्चयघटनानयो निट्ठितो ।।

५. रूपकलापेसु पच्चयघटनानयो

रूपकलापेसु पच्चयघटनानयो वुच्चते। अट्ठवीसति रूपानि नाम, चत्तारि महाभूतानि पथवी आपो तेजो वायो। पञ्च पसादरूपानि चक्खु सोतं घानं जिव्हा कायो। पञ्च गोचररूपानि रूपं सद्दो गन्धो रसो फोट्ठब्बं। तत्थ फोट्ठब्बं तिविधं पथवीफोट्ठब्बं तेजोफोट्ठब्बं वायोफोट्ठब्बं। द्वे भावरूपानि इत्थिभावरूपं पुम्भावरूपं। एकं जीवितरूपं, एकं हदयरूपं। एकं आहाररूपं। एकं आकासधातुरूपं। द्वे विञ्ञत्तिरूपानि कायविञ्ञत्तिरूपं वचीविञ्ञत्ति रूपं। तीणि विकाररूपानि लहुता मुदुता कम्मञ्ञता। चत्तारि लक्खणरूपानि उपचयो सन्तति जरता अनिच्चता।

तत्थ छ रूपधम्मा रूपधम्मानं पच्चया होन्ति चत्तारि महाभूतानि च जीवितरूपञ्च आहाररूपञ्च। तत्थ चत्तारि महाभूतानि अञ्ञमञ्ञस्स पञ्चहि पच्चयेहि पच्चया होन्ति सहजातेन च अञ्ञमञ्ञेन च निस्सयेन च अत्थिया च अविगतेनच। सहजातानं उपादारूपानं अञ्ञमञ्ञवज्जितेहि चतूहि पच्चयेहि पच्चया होन्ति। जीवितरूपं सहजातानं कम्मजरूपानं इन्द्रियपच्चयेन पच्चयो। आहाररूपं सहजातानञ्च असहजातानञ्च सब्बेसं अज्झत्तरूपधम्मानं आहारपच्चयेन पच्चयो।

तत्थेव तेरस रूपधम्मा नामधम्मानं विसेसपच्चया होन्ति, पञ्चपसादरूपानि च सत्त गोचररूपानि च हदयवत्थुरूपञ्च। तत्थ पञ्च पसादरूपानि पञ्चन्नं विञ्ञाणधातूनं मातरो विय पुत्तकानं वत्थुपुरेजातेन च वत्थुपुरेजातिन्द्रियेन च वत्थु पुरेजातविप्पयुत्तेन च पच्चया होन्ति। सत्त गोचररूपानि पञ्चन्नं विञ्ञाणधातूनं तिस्सन्नं मनोधातूनञ्च पितरो विय पुत्तकानं आरम्मणपुरेजातेन पच्चया होन्ति। [B 502] हदयवत्थुरूपं द्विन्नं मनोधातु मनोविञ्ञाणधातूनं रुक्खो विय रुक्खदेवतानं यथारहं पटिसन्धिक्खणे सहजातनिस्सयेन पवत्तिकाले वत्थुपुरेजातेन च वत्थुपुरेजात-विप्पयुत्तेन च पच्चयो होति।

तेवीसति रूपकलापा। तत्थ एकाय रज्जुया बन्धितानं केसानं केसकलापो विय तिणानं तिणकलापो विय एकेन जातिरूपेन बन्धितानं रूपधम्मानं कलापो परिपिण्डिरूप कलापो नाम।

तत्थ चत्तारि महाभूतानि वण्णो गन्धो रसो ओजाति इमे अट्ठ धम्मा एको सब्बमूलकलापो नाम, सब्बमूलट्ठकन्ति च वुच्चति।

नव कम्मजरूपकलापा—जीवितनवकं वत्थुदसकं काय दसकं इत्थिभावदसकं पुम्भावदसकं चक्खुदसकं सोतदसकं घानदसकं जिव्हदसकं। तत्थ सब्बमूलट्ठकमेवजीवितरूपेन सह जीवितनवकं नाम। एतदेव कम्मजकलापेसु मूलनवकं होति। मूलनवकमेव यथाक्कमं हदयवत्थुरूपादीहि अट्ठरूपेहि सह वत्थुदसकादीनि अट्ठदसकानि भवति। तत्थ जीवितनवकञ्च कायदसकञ्च भावदसकानिचाति चत्तारो कलापा सकलकाये पवत्तन्ति। तत्थ जीवितनवकन्ति पाचकग्गि च कायग्गि च वुच्चति। पाचकग्गि नाम पाचकतेजो कोट्ठासो, सो आमासये पवत्तित्वा असितपीतखायितसायितानि परिपाचेति। कायग्गि नाम सकलकायव्यापको उस्मातेजो कोट्ठासो, सो सकल काये पवत्तित्वा पित्तसेम्हलोहितानि अपूतीनि विप्पसन्नानि करोति। तेसं द्विन्नं विसमवुत्तिया सति सत्ता बह्वाबाधा होन्ति, समवुत्तिया सति अप्पाबाधा। तदुभयं जीवितनवकं सत्तानं आयुं सम्पादेति। वण्णं सम्पादेति। कायदसकं सकलकाये सुखसम्फस्स दुक्खसम्फस्सानि सम्पादेति। भाव दसकानि इत्थीनं सब्बे इत्थाकारे सम्पादेति। पुरिसानं सब्बे पुरिसाकारे सम्पादेहि। सेसानि वत्थुदसकादीनि पञ्चदसकानि पदेसदसकानि नाम। तत्थ वत्थुदसकं हदयकोसब्भन्तरे पवत्तित्वा सत्तानं नानापकारानि सुचिन्तितदुचिन्तितानि सम्पादेति। चक्खुदसकादीनि चत्तारि दसकानि चक्खुगुळ कण्णबिल नासबिल जिव्हतलेसु पवत्तित्वा दस्सन सवन घायन सायनानि सम्पादेति।

अट्ठ चित्तजरूपकलापा, सब्बमूलट्ठकं सद्दनवकं काय विञ्ञत्तिनवकं सद्दवचीविञ्ञत्तिदसकन्ति चत्तारो मूलकलापा च तेयेव लहुता मुदुता कम्मञ्ञतासङ्खातेहि तीहि विकार रूपेहि सह चत्तारो सविकारकलापा च।

[B 503] तत्थ सरीरधातूनं विसमप्पवत्तिकाले गिलानस्स मूलकलापानि एव पवत्तन्ति। तदा हि तस्स सरीररूपानि गरूनि वा थद्धानि सा अकम्मञ्ञानि वा होन्ति, यथारुचि इरियपथंपि पवत्तेतुं अङ्ग पच्चङ्गानिपि चालेतुं वचनंपि कथेतुं दुक्खो होति। सरीरधातूनं समप्पवत्तिकाले पन अगिलानस्स गरुथद्धादीनं सरीरदोसानं अभावतो सविकारा पवत्तन्ति। तेसु च चित्तङ्गवसेन कायङ्ग चलने द्वे

कायविञ्ञत्तिकलापा पवत्तन्ति। चित्तवसेनेव मुखतो वचनसद्दप्पवत्तिकाले द्वे वचीविञ्ञत्तिकलापा, चित्तवसेनेव अक्खरवण्णरहितानं हसनरोदनादीनं अवचनसद्दानं मुखतो पवत्तिकाले द्वे सद्दकलापा, सेसकालेसु द्वे आदि कलापा पवत्तन्ति।

चत्तारो उतुजरूपकलापा, सब्बमूलट्ठकं सद्दनवकन्ति द्वे मूलकलापा च द्वे सविकारकलापा च। तत्थ अयं कायो यावजीवं इरियापथसोतं अनुगच्छन्तो यापेति, तस्मा इरियापथनानत्तं पटिच्च इमस्मिं काये खणे खणे धातूनं समप्पवत्तिविसमप्पवत्तियो पञ्ञायन्ति। तथा उतुनानत्तं पटिच्च आहारनानत्तं पटिच्च वातातपसम्फस्सनानत्तं पटिच्च कायङ्ग परिहारनानत्तं पटिच्च अत्तूपक्कमपरूपक्कमनानत्तं पटिच्च। तत्थ विसमप्पवत्तिकाले द्वे मूलकलापा एव पवत्तन्ति, समप्पवत्तिकाले द्वे सविकारा। तेसु च द्वे सद्दकलापा चित्तजसद्दतो परम्परसद्देसु च अञ्ञेसु लोके नानप्पकारसद्देसु च पवत्तन्ति।

द्वे आहारजरूपकलापा—सब्बमूलट्ठकं सविकारन्ति। इमे द्वे कलापा सप्पायेन वा असप्पायेन वा आहारेन जातानं समरूपविसमरूपानं वसेन वेदितब्बा।

आकासधातु च लक्खणरूपानिचाति पञ्चरूपानि कलाप मुत्तानि होन्ति। तेसु आकासधातु कलापानं अन्तरा परिच्छेद मत्तत्ता कलापमुत्ता होति। लक्खणरूपानि सङ्खतभूतानं रूप कलापानं सङ्खतभावजाननत्थाय लक्खणमत्तत्ता कलाप मुत्तानि।

इमे तेवीसति कलापा अज्झत्तसन्ताने लब्भन्ति। बहिद्धा सन्ताने पन द्वे उतुजमूलकलापा एव लब्भन्ति। तत्थ द्वे रूपसन्तानानि अज्झत्तसन्तानञ्च बहिद्धासन्तानञ्च। तत्थ अज्झत्तसन्तानं नाम सत्तसन्तानं वुच्चति। बहिद्धासन्तानं नाम पथवीपब्बतनदीसमुद्द रुक्खतिणादीनि वुच्चति। तत्थ अज्झत्तसन्ताने अट्ठवीसति रूपानि तेवीसति रूपकलापानि लब्भन्ति।

[B 504] तत्थ पटिसन्धिनामधम्मा पटिसन्धिक्खणे कम्मजरूपकलापानं छधा पच्चया होन्ति चतूहि महासहजातेहि च विपाकेन च विप्पयुत्तेन च। हदयवत्थुरूपस्स पन अञ्ञमञ्ञेन सह सत्तधा पच्चया होन्ति। तेस्वेव नामधम्मेसु हेतुधम्मा हेतुभावेन, चेतना कम्मभावेन, आहारधम्मा आहारभावेन, इन्द्रिय धम्मा इन्द्रियभावेन, झानधम्मा झान भावेन, मग्गधम्मा मग्ग भावेनाति यथारहं छधा पच्चया होन्ति। अतीतानि पन कुसलासुकलकम्मानि एकधाव पच्चया होन्ति कम्मपच्चयेन, पठमभवङ्गादिका पच्छाजाता पवत्तनामधम्मा पुरेजातानं कम्मजरूप कलापानं एकधा पच्चया होन्ति पच्छाजातेन। एत्थ च पच्छाजात वचनेन चत्तारो पच्छाजातजातिका पच्चया गहिता होन्ति। अतीतानि च कम्मानि एकधाव पच्चया

होन्ति। एवं नामधम्मा कम्मजरूपकलापानं यथारहं चुद्दसहि पच्चयेहि पच्चया होन्ति। इध दसपच्चया न लब्भन्ति आरम्मणञ्च अधिपति च अनन्तरञ्च समनन्तरञ्च उपनिस्सयो च पुरेजातो च आसेवनञ्च सम्पयुत्तो च नत्थि च विगतो च।

पवत्तिकाले रूपजनका नामधम्मा अत्तना सहजातानं चित्तजरूपकलापानं पञ्चधा पच्चया होन्ति चतूहि महासहजातेहि च विप्पयुत्तेन च। तेस्वेव नामधम्मेसु हेतुधम्मा हेतुभावेन, अधिपतिधम्मा अधिपतिभावेन, चेतना कम्मभावेन, विपाकधम्मा विपाकभावेन, आहारधम्मा आहार भावेन, इन्द्रियधम्मा इन्द्रियभावेन, झानधम्मा झानभावेन, मग्गधम्मा मग्गभावेनाति यथारहं अट्ठधा पच्चया होन्ति। पच्छजाता सब्बे नामधम्मा पुरेजातानं चित्तजरूपकलापानं एकधा पच्चया होन्ति पच्छाजातेन। एवं नामधम्मा चित्तजरूपकलापानं यथारहं चुद्दसहि पच्चयेहि पच्चया होन्ति। इधपि दस पच्चया न लब्भन्ति आरम्मणञ्च अनन्तरञ्च समनन्तरञ्च अञ्ञमञ्ञञ्च उपनिस्सयो च पुरेजातो च आसेवनञ्च सम्पयुत्तो च नत्थि च विगतो च।

पटिसन्धिचित्तस्स ठितिकालतो पट्ठाय पवत्तिकाले सब्बेपि नामधम्मा सब्बेसं उतुजरूपकलापानञ्च आहारजरूपकलापानञ्च एकधा पच्चया होन्ति पच्छाजातवसेन। एत्थपि पच्छाजातवचनेन चत्तारो पच्छाजातजातिका गहिता होन्ति, सेसा वीसति पच्चया न लब्भन्ति।

सब्बेसु पन तेवीसतिया रूपकलापेसुचत्तारोमहाभूता अञ्ञमञ्ञस्स पञ्चधा [B 505] पच्चया होन्ति चतूहि महासहजातेहि च अञ्ञमञ्ञेन च, सहजातानं उपादारूपानं चतुधा पच्चया होन्ति चतूहि महासहजातेहि आहाररूपं सहजातानञ्च असहजातानञ्च सब्बेसं अज्झत्तरूपकलापानं आहारपच्चयेन पच्चयो होति। नवसु कम्मजरूपकलापेसु जीवितरूपं सहजातानमेव रूपानं इन्द्रियपच्चयेन पच्चयो होति। एवं अज्झत्तरूपधम्मा अज्झत्तरूपधम्मानं सत्तधा पच्चया होन्ति। बहिद्धा रूपधम्मा पन बहिद्धाभूतानं द्विन्नं उतुजरूपकलापानं पञ्चधा पच्चया होन्तीति।

।। रूपकलापेसु पच्चयघटनानयो निट्ठितो ।।

६. पट्ठानसद्दस्सत्थ वण्णना

एत्थ च पट्ठानसद्दस्स अत्थो वत्तब्बो। पधानं ठानन्ति पट्ठानं[1]। तत्थ पधानन्ति पमुखं, ठानन्ति पच्चयो, पमुखपच्चयो मुख्यपच्चयो एकन्तपच्चयोति वुत्तं होति। सो च एकन्तपच्चयो एकन्तपच्चयुप्पन्नं पटिच्च वत्तब्बो।

१. 'नानाप्पकारपच्चयट्ठेन। 'प' कारो हि नानाप्पकारत्थ दीपेति, ठानसद्दो पच्चयत्थं ठानट्ठानकुसलता ति आदीसु हि पच्चयो ठानं ति वुत्तो। इति नानप्पकारानं पच्चयानं वसेन देसतत्ता इमेसु चतुवीसतिया पट्ठानेसु एकेकं पट्ठानं नाम। इमेसं पन पट्ठानानं समूहतो सब्बं पेतं पकरणं पट्ठानं ति वेदितब्बं'। (प.अ., पृ. ६९)

दुविधञ्हि पच्चयुप्पन्नं मुख्यपच्चयुप्पन्नं निस्सन्दपच्चयुप्पन्नन्ति। तत्थ मुख्यपच्चयुप्पन्नं नाम मूलपच्चयुप्पन्नं, निस्सन्दपच्चयुप्पन्नं नाम परम्पर पच्चयुप्पन्नं। तत्थ मूलपच्चयुप्पन्नमेव एकन्तपच्चयुप्पन्नं नाम। तञ्हि अत्तनो पच्चये सति एकन्तेन उप्पज्जतियेव, नो नुप्पज्जति। परम्परपच्चयुप्पन्नं पन अनेकन्तपच्चयुप्पन्नं नाम, तञ्हि तस्मिं पच्चये सतिपि उप्पज्जति वा, न वा उप्पज्जति। तत्थ एकन्तपच्चयुप्पन्नं पटिच्च सो पच्चयो एकन्तपच्चयो नाम। सो 'एव इमस्मिं महापकरणे वुत्तो। ततो एव अयं चतुवीसतिपच्चयगणो च इमं महापकरणञ्च पट्ठानन्ति वुच्चति[१]।

तत्थ एकस्स पुरिसस्स धनधञ्ञत्थाय लोभो उप्पज्जति। सो लोभवसेन उट्ठाय अरञ्ञं गन्त्वा एकस्मिं पदेसे खेत्तानि करोति, वत्थूनि करोति, उय्यानानि करोति। तेसु सम्पज्जमानेसु सो पुरिसो बहूनि धनधञ्ञानि लभित्वा अत्तना च परिभुञ्जति, पुत्तदारे च पोसेति, पुञ्ञानि च करोति, पुञ्ञफलानि च आयतिं पच्चनुभविस्सति। तत्थ लोभसहजातानि नामरूपानि मुख्यपच्चयुप्पन्नानि नाम। ततो परं याव आयतिं भवेसु पुञ्ञफलानि पच्चनुभोति, ताव उप्पन्नानि परम्परफलानि तस्स लोभस्स निस्सन्दपच्चयुप्पन्नानि नाम। तेसु द्वीसु पच्चयुप्पन्नेसु मुख्यपच्चयुप्पन्नमेव पट्ठाने वुत्तं। निस्सन्दपच्चयुप्पन्नं पन सुत्तन्तनयेन कथेतब्बं। तत्थ सुत्तन्तनयो नाम इमस्मिं सति इदं होति, इमस्स उप्पादा इदं उप्पज्जतीति एवरूपो पच्चयनयो। अपि च लोभो दोसो मोहोति तयो धम्मा सकलस्स सत्तलोकस्सपि सङ्खारलोकस्सपि ओकास लोकस्सपि विपत्तिया मूलट्ठेन हेतू नाम। [B 506] अलोभो अदोसो अमोहोति तयो धम्मा सम्पत्तिया मूलट्ठेन हेतूनामाति कथेतब्बं। एस नयो सब्बेसु पट्ठानपच्चयेसु यथारहं वेदितब्बो। एवञ्च सति लोको सब्बा लोकप्पवत्तियो इमेसं चतुवीसतिया पच्चयानं मुख्य पच्चयुप्पन्नेन सद्धिं निस्सन्दपच्चयुप्पन्ना एव होन्तीति वेदितब्बोति।

एत्तावता पच्चयानं अत्थदीपना पच्चयानं सभागसङ्गहो पच्चयानं घटनानयोति तीहि कण्डेहि परिच्छिन्ना पट्ठानुद्देसदीपनी निट्ठिता होति।

।। म्रम्मरट्ठे मौंज्वानगरे लेडीतीअरञ्ञविहारवासिना महाथेरेन कतायं पच्चयुद्देसदीपनी ।।

●

---

१. 'नानाप्पकारणानि ठानानि पच्चया एत्थात्यादिना पट्ठानं, अनन्तनय-समन्त-पट्ठान महाप्पकरणं'। (अ.वि. टीका, पृ. २०९)

सुसंग्रहणीय अभिनव-प्रकाशन

१. **माध्यन्दिन-शतपथब्राह्मणम्** : इस अपूर्व वैदिक ग्रन्थ का प्रकाशन सायणाचार्य-कृत **'वेदार्थप्रकाश'** संस्कृत-भाष्य एवं **हिन्दी-भाषानुवाद** के साथ किया गया है। हिन्दी-भाषानुवाद के साथ इसका सम्पादन प्रो. युगल किशोर मिश्र ने किया है। प्रथम भाग : ८००.००

२. **वैदिकशिक्षास्वरूपविमर्शः** : डॉ. राममूर्ति चतुर्वेदी द्वारा प्रणीत इस ग्रन्थ में वैदिक शिक्षा के स्वरूप का अनुसन्धानात्मक विवेचन विस्तारपूर्वक किया गया है। ३६०.००

३. **कातन्त्रव्याकरणम्** : आचार्य शर्ववर्मा द्वारा प्रणीत व्याकरणशास्त्र के इस ग्रन्थ का प्रकाशन चार टीकाओं के साथ हुआ है। उत्कृष्ट भूमिका तथा अनुसन्धानात्मक परिशिष्टों के साथ इस ग्रन्थ का सम्पादन डॉ. जानकी प्रसाद द्विवेदी ने किया है।
भाग-१ : ३५०.०० भाग-२ खण्ड-१ : ५००.०० भाग-२ खण्ड-२ : ६००.००
भाग-३ खण्ड-१ : ४८०.०० भाग-३ खण्ड-२ : ५००.०० भाग-४ ८००.००

४. **लघुशब्देन्दुशेखरः (कारकप्रकरणम्)** : व्याकरणशास्त्र के इस महनीय ग्रन्थ का प्रकाशन पं. श्री भैरव मिश्र की **'भैरवी'** संस्कृत-व्याख्या तथा डॉ. तेजपाल शर्मा की संस्कृतनिष्ठ **हिन्दी-व्याख्या** के साथ किया गया है। ४००.००

५. **वास्तुसारसङ्ग्रहः** : फलित ज्योतिष के इस अपूर्व ग्रन्थ का प्रकाशन आचार्य श्री कमलाकान्त शुक्ल की **हिन्दी-व्याख्या** के साथ किया गया है। २८०.००

६. **उपदेशसाहस्री** : श्री शङ्करभगवत्पादाचार्य-विरचित इस ग्रन्थ का प्रकाशन सरस्वतीभवन-पुस्तकालय की हस्तलिखित पाण्डुलिपि के आधार पर किया गया है। इसके सम्पादक प्रो. रामकिशोर त्रिपाठी हैं। इसमें सम्पूर्ण उपनिषदों का सार संग्रहीत है। २८०.००

७. **दुर्गासप्तशती** : दुर्गासप्तशती के इस उत्कृष्ट संस्करण में प्राचीन एवं दुर्लभ सात संस्कृत-टीकाओं का संयोजन किया गया है। विशिष्ट भूमिका, हिन्दी अनुवाद एवं आवश्यक परिशिष्टों के साथ इसका सम्पादन डॉ. गिरिजेश कुमार दीक्षित ने किया है। ८००.००

८. **[illegible]** : श्री विश्वेश्वर पण्डित द्वारा विरचित इस ग्रन्थ का प्रकाशन हस्तलिखित पाण्डुलिपि के आधार पर किया गया है। इसमें धर्मशास्त्रीय विषयों का विस्तृत प्रतिपादन हुआ है। १८०.००

९. **मालिनीविजयोत्तरतन्त्रम्** : तन्त्रशास्त्र के इस मूर्द्धन्य ग्रन्थ का प्रकाशन डॉ. परमहंस मिश्र 'हंस' के **'नीर-क्षीर-विवेक'** हिन्दी-भाषा-भाष्य के साथ उन्हीं के सम्पादकत्व में किया गया है। २४०.००

१०. **लोकमाता गङ्गा** : लोकमाता गङ्गा के अलौकिक एवं ऐतिहासिक स्वरूप के परिचायक इस महनीय ग्रन्थ का प्रणयन आचार्य श्री कुबेरनाथ शुक्ल जी ने किया है। इसमें गङ्गा जी से सम्बद्ध समग्र विषयों का साङ्गोपाङ्ग विवेचन किया गया है। २४०.००

११. **समीक्षासौरभम्** : प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा प्रणीत समीक्षात्मक एवं अनुसन्धानात्मक निबन्धों को सङ्कलित कर इस महनीय ग्रन्थ को प्रकाशित किया गया है। ३००.००

१२. **काव्यप्रकाशः** : साहित्यशास्त्र के प्राणभूत इस ग्रन्थ का प्रकाशन संस्कृत-भाषा में प्रणीत श्री गोविन्द ठाकुर की **'प्रदीप'** व्याख्या तथा श्री नागोजी भट्ट की **'उद्द्योत'** व्याख्या के साथ किया गया है। इसका सम्पादन साहित्य-शास्त्र के मनीषी विद्वान् आचार्य श्री शिवजी उपाध्याय ने किया है। ५८०.००

पत्रव्यवहारसङ्केत : निदेशक, प्रकाशन-संस्थान, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी-२२१००२